संजय की कलम से ..

भगाइये क्रोध रूपी भूत को

संसार में जितनी भी प्रकार की अग्नि हैं, वे मानव की अंतरात्मा या मन को नहीं जलातीं किंतु क्रोध एक ऐसी अग्नि है जो मन को भी जलाकर जीवन के सार को नष्ट कर देती है। अत: जब कोई मनुष्य क्रोध करता है तो लोग कहते हैं कि 'वह आग-बबूला हो गया, उसके क्रोध का ज्वालामुखी फट पड़ा।' इस प्रकार स्पष्ट है कि जो मनुष्य जीवित अवस्था में स्वयं को बार-बार क्रोध की चिता पर जलाता है, वह अज्ञानी है। मुर्दे को जब अग्नि पर लिटाया जाता है तो उसे अग्नि का दाह अनुभव नहीं होता परंतु कितने आश्चर्य की बात है कि जीवित मनुष्य क्रोध में स्वयं को दुखी करता है और फिर कहता है कि 'मैंने फलां मनुष्य को सीधा कर दिया, मैंने उसका दिमाग ठिकाने लगा दिया, मैंने उसके होश ही उड़ा दिए, मैंने उसको मज़ा चखा दिया।' स्पष्ट है कि क्रोध द्वारा अपने दिमाग को बे-ठिकाने करने वाला, अपने स्वरूप को उलटाने वाला और अपने मज़े को गँवाने वाला मनुष्य स्वयं ही होश में नहीं होता, उसके अपने ही होश उड़ गए होते हैं, तभी तो हम कई बार देखते हैं कि मनुष्य क्रोधावेश से अपने कपड़े भी फाड़ने लगता है, बाल उखाड़ने लगता है और जबड़े फाड़-फाड़ कर बोलने लगता है। अत: क्रोध एक प्रकार का भूत है क्योंकि भूतों को मानने वाले लोग भी कहा करते हैं कि जब किसी में भूत प्रवेश होता है, तब वह भूत भी कपड़े फाड़ने लगता है, सिर को बुरी तरह पीटने लगता है अथवा अन्यान्य प्रकार से स्वयं भी दुखी होता है और दूसरों को भी दुखी करता है। इसलिए परमपिता परमात्मा शिव कहते हैं कि अब इस क्रोध रूपी भूत को भगा दो।

क्रोधी मनुष्य कहता है कि लोग मेरी बात मानते ही नहीं, इसलिए मुझे क्रोध करना पड़ता है। उसके कहने का भाव यह हुआ कि क्रोध का ही सिक्का चलता है परंतु अब परमपिता परमात्मा कहते हैं कि यदि दूसरों पर क्रोध रूपी गोली चलाओगे, कड़वे वचन रूपी पत्थर बरसाओगे, दुखदायक शब्द रूपी बम फेंकोगे तो मरते समय तुम्हें ऐसी पीड़ा होगी जैसे किसी का सीना गोलियों से छलनी हो रहा हो, किसी के सिर पर बम मार दिया गया हो अथवा किसी के माथे पर ज़ोर से पत्थर जा लगा हो। अत: यदि अपने जीवन को अभी सुखी बनाना चाहते हो और स्वर्ग का राज्य-भाग्य पाना चाहते हो तो क्रोध का विरोध करके अब प्रेम की गंगा बहाओ। **(शेष..पृष्ठ 9 पर)**

अमृत-सूची

- मन की धुलाई *(सम्पादकीय)*..... 2
- ऐसे मिली जीवन को 4
- प्रश्न हमारे, उत्तर आपके..... 5
- पुरुषोत्तम संगमयुग एवं..... 7
- स्वर्ग का द्वार है नारी 10
- 'पत्र' संपादक के नाम.....12
- बाबा प्यार तुम्हारा *(कविता)*..12
- सचित्र सेवा समाचार..... 13
- परिस्थिति - वरदान या..... 15
- सचित्र सेवा समाचार..... 17
- डिप्रेशन: जानकारी और..... 21
- 'अपमान'- महान बनने का...24
- चिन्ता से मुक्ति 27
- ज़रूरी है परिवार 28
- संकल्पों से प्रकृति परिवर्तन...29
- अनगिनत खज़ाने *(कविता)*... 31
- पहाड़ जैसा दुख भूल गई.....32

सदस्यता शुल्क

	वार्षिक	आजीवन
भारत		
ज्ञानामृत	75 /-	1,500/-
वर्ल्ड रिन्युअल	75/-	1,500/-
विदेश		
ज्ञानामृत	700 /-	7,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	700/-	7,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383

सम्पादकीय ..✍

मन की धुलाई

विज्ञान ने जहाँ अनेक प्रकार के साधन मानव को दिए वहाँ धुलाई-सफाई के क्षेत्र में भी क्रांतिकारी साधन उपलब्ध कराए हैं। जंगलों को तुरंत साफ कर देने वाली, रास्तों को समतल और सुन्दर कर देने वाली मशीनरी के साथ-साथ कपड़ों, मकानों, वाहनों, गहनों की सफाई-धुलाई के लिए अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थ बाज़ार में उपलब्ध हैं। आधुनिक मानव सफाई के प्रति अधिक जागरूक भी है, सफाई का महत्त्व अच्छी तरह समझता भी है। सफाई का स्वास्थ्य से सीधा संबंध है। आवास, वस्त्र, तन, भोजन की स्वच्छता अनेक रोगों से बचाती है। साफ-सुथरा लिबास व्यक्ति के सभ्य और सुरुचिपूर्ण होने का प्रतीक है। इसलिए कहा जाता है, लिबास चाहे सस्ता हो पर स्वच्छ हो। लिबास पर लगी अस्वच्छता या दाग-धब्बों को मिटाने के लिए मानव पूरा ज़ोर लगाता है। बाज़ार से महंगे डिटर्जेन्ट खरीदता है। उनसे भी काम ना बने तो कई प्रकार के महंगे केमिकल्स खरीदता है। कपड़े का बारीकी से मुआयना करता है कि धुलाई के बाद कोई दाग रह तो नहीं गया। दागदार कपड़े को पहनकर भूलकर भी लोगों के बीच आना नहीं चाहता और यदि भूल से कभी ऐसा हो भी जाए तो उसका मन बेचैन हो उठता है, मेल-मिलाप की सारी खुशियाँ भूल वह उस दाग पर ही नज़रें गड़ाए रखता है कि यह मेरे लिबास पर लगा क्यों और अब उतरे कैसे? यदि नहीं उतरा तो मैं इस लिबास को ही फेंक दूँगा। ऐसी ही बेचैनी मकानों, गाड़ियों या अन्य उपभोग की वस्तुओं पर दरार, खरोंच आ जाने पर मानव महसूस करता है, शीघ्रातिशीघ्र उसे मिटाने की भरपूर कोशिश करता है।

सवाल यह है कि क्या केवल बाह्य जगत की बाह्य चीज़ों को धो-पोंछ लेने मात्र से, आवास-लिबास को चमका लेने मात्र से मानव जीवन की सच्ची खुशियाँ अर्जित की जा सकती हैं। बाह्य सफाई आवश्यक है पर उससे कई गुणा अधिक आवश्यक है, भीतर की सफाई – आत्मा के मन की, भावनाओं की, कल्पनाओं की और स्मृतियों की सफाई।

ज़रूरी है आंतरिक जगत का बेदाग होना

स्वच्छ आत्मा हीरे के समान होती है। उसमें से स्वत: मूल गुणों के प्रकंपन निरंतर वातावरण में फैलते रहते हैं। जैसे लाइट हाऊस लाइट बिखेरता है ऐसे ही बेदाग आत्मा शान्ति, सुख, प्रेम, पवित्रता, आनन्द, शक्ति की किरणें बिखेरती है। अत: कपड़ों को उलट-पलटकर देखने की तरह, प्रतिदिन अपने ही स्वरूप को हर पहलू से निहारना, उसकी पवित्रता को परखना और इस पवित्रता की वृद्धि के लिए योजना बनाना, बाह्य स्वच्छता से भी अधिक अनिवार्य है। बाह्य जगत, भीतर का ही प्रतिबिम्ब है। आंतरिक जगत के बेदाग हो जाने पर बाहर अपने आप सच्चाई, सफाई के कमल खिलने लगते हैं।

क्या मन के रोगों को पड़ा रहने दें?

यदि शरीर में छोटा-सा भी रोग हो जाए तो झट डॉक्टर के पास जाते हैं। ठीक कराने के लिए अधीर हो उठते हैं। यह ठीक भी है, शरीर सेवा का साधन है, इसे ठीक रखना हमारा कर्त्तव्य है परंतु शरीर फिर भी, पुरुष (आत्मा) का कुछ कार्यों का साथी है। परन्तु मन, बुद्धि, संस्कार – ये शक्तियाँ तो आत्मा की सदा की साथी हैं। अब यदि मन में ईर्ष्या, द्वेष, बदला, नफरत, लगाव, पक्षपात, महत्त्वाकांक्षा, कामना, तृष्णा का रोग हो तो क्या उसे पड़ा रहने दें? क्या उससे कोई तकलीफ नहीं होती?

शारीरिक दर्द तो केवल एक उसी आत्मा को होता है परंतु मन के विकारों का दर्द तो दूर-दूर तक जाता है, कइयों को दर्द देने के निमित्त बन जाता है। इसलिए मानसिक रोगों को शारीरिक रोगों से कई गुणा ज़्यादा खतरनाक कहा गया है।

कैसे जाँचें मन की शुद्धि-अशुद्धि को?

कई कहते हैं, हमें पता ही नहीं पड़ता कि हमारे मन में कोई विकार है भी। है तो कौन-सा विकार है? पता कैसे पड़े? जैसे शारीरिक विकार (रोग) के चिन्ह होते हैं, ऐसे ही मानसिक विकार के भी चिन्ह होते हैं। मान लो, हमारे घर में टोकरियों में कई प्रकार की सब्जियाँ पड़ी हैं। हम उधर से गुज़रे तो विचित्र प्रकार की गंदी गंध हमारे नाक में घुस गई। हमें तुरन्त पता पड़ गया कि आलू सड़ रहा है या टमाटर। हम टोकरे में हाथ मारते हैं और गली चीज़ को निकाल फेंकते हैं। गंध समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार मन में जमे विकार की गंदी गंध भी, गंदे संकल्पों के रूप में फैलती है। संकल्पों की क्वालिटी से हम पहचान सकते हैं कि अंदर किस प्रकार का विकार है। यदि मन कहता है, 'अमुक व्यक्ति को दुखदायी मौत मिलनी चाहिए', तो अवश्य ही अंदर में बदले की भावना या ईर्ष्या या अपूर्ण कामना या नफरत का विकार है। अगर मन कहता है, 'उसे सफलता ना मिले', तो अवश्य ही अंदर में ईर्ष्या, बड़प्पन का विकार है।

दवाई है आत्मावलोकन और आत्म-परिवर्तन

मन के इन विकारों की दवाई क्या है? दवाई है आत्म-अवलोकन। हाँ, आत्म-अवलोकन करें और आत्म-परिवर्तन करें। अपने पर रहम करें कि हे आत्मन्, परमपिता की संतान और प्रजापिता ब्रह्मा की मुख वंशावली होकर भी इतने सस्ते विचारों को चबाते-चबाते जन्म व्यतीत कर दिया। भगवान ने शुभ भावों के इतने भण्डार दिए पर आपने उनको ठुकराकर ये तुच्छ भाव ही मन के स्टोर में भर लिए, अपने पर ऐसा अन्याय क्यों किया? यह अन्याय तो आप ही अपने पर कर रहे हो तो क्या अपने से ऐसी दुश्मनी बना ली है? अपने से सच्चा प्रेम है तो इन गले-सड़े विचारों को निकाल फेंको और प्रभु की दी हुई ऊँची स्मृतियों से मन को भरपूर करो।

अतिरिक्त कार्यभार क्यों उठाएँ?

यादगार ग्रंथ महाभारत में प्रसंग आता है कि अर्जुन को दुर्योधन पर गुस्सा आया और उसने बदला लेने की भावना व्यक्त की। युधिष्ठिर ने पूछा, 'क्या दुर्योधन को सज़ा देने का अधिकार तुमको मिल गया?' यह वाक्य आत्म-अवलोकन के लिए हमें अपने से भी पूछना है। वास्तव में ना तो लौकिक सरकार ने, ना अलौकिक सरकार ने हमको किसी के अपराधों के लिए दण्ड देने के निमित्त बनाया है, तो फिर हम अपने मिले हुए कार्यों में यह अतिरिक्त कार्य जोड़कर अपना भार क्यों बढ़ाते हैं? दण्ड देने का कार्य जिसका भी है, वो करे, हमें भगवान ने सबके प्रति शुभ सोचने, प्यार करने, कल्याण करने, मदद करने, क्षमा करने का कार्य दिया है। दण्ड देने का कार्य छोड़ करके, ये सभी श्रेष्ठ कार्य हमें मन लगाकर करने हैं।

फसल देखकर दुखी न हों, बीज को बदलें

यदि कोई व्यक्ति हाथ में अंगारा उठाकर दूसरे पर फेंकता है तो पहले तो उसके अपने हाथ जलते हैं। इसी प्रकार कोई दूसरे का बुरा सोचता है तो पहले उसका अपना बुरा होता है। शरीर बीमार हुआ, धन-हानि हुई, संबंध कड़वा हुआ, प्रकृति ने नुकसान किया – ये सब हमारे ही बोये बीजों के फल हैं। तो फसल को देख दुखी होने और दोषारोपण करने के बजाय क्यों ना हम बीजों को संवार लें। अपने संकल्पों को ईश्वरीय ज्ञान और योग से इस कदर धो लें जो अगले 21 जन्मों तक उनसे कोई अनचाहा फल

न निकले। एक बार एक व्यक्ति के पास गाय थी, उसके पड़ोसी के पास भैंस थी। गाय कम दूध देती थी, भैंस ज्यादा देती थी। व्यक्ति को ईर्ष्या होती थी। उसने भगवान से बहुत प्रार्थना की – हे प्रभु, इसकी भैंस को मार दो, मुझे बड़ी शान्ति मिलेगी। कुछ समय बाद उसकी गाय मर गई। वह दौड़ा-दौड़ा मन्दिर गया और कहने लगा, भगवान आपको यह भी पता नहीं कि भैंस काली और गाय सफेद होती है। आपने गलती से भैंस के स्थान पर गाय को मार दिया। देखिये तो सही, अज्ञान का पर्दा कितना गहरा है। उसे भगवान की गलती दिख रही है, अपनी नहीं।

अपनी ग़लती देखने के लिए अपने से बातें करो, अपने से कहो – जितनी देर दूसरों के बारे में व्यर्थ सोचने में लगाऊँ, क्यों ना उतनी देर भगवान से प्रेम बढ़ाऊँ? फिर भगवान प्यार करने को कब मिलेगा? प्रभु से प्यार करने में मिठास मिलता है पर व्यर्थ सोचने में तो मन-बुद्धि के रास्ते में कंकर अटकने जैसा अनुभव होता है। भगवान को पाकर भी मन-बुद्धि की चाल उलटी ही रही तो और कौन-सा युग आएगा जिसमें यह सीधी होगी! इसलिए रहम, रहम, हे आत्मन्, स्वयं पर रहम!

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

ऐसे मिली जीवन को नई दिशा

ब्रह्माकुमार नैना बहादुर क्षेत्री, जिला कारागार, तिनसुकिया

मैं गाँव सदिया, शान्तिपुर-तीन नम्बर, जिला तिनसुकिया (असम) का स्थायी निवासी हूँ। खेती मेरी जीविका थी। जेल में आने से पहले मैं भ्रष्ट और पतित था। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के भूत मुझ पर सवार थे। इस कारण समाज की झूठी प्रशंसाओं में मैं झूमता रहा। बढ़ते हुए विकारों के फलस्वरूप मैं मानसिक रूप से कमज़ोर हो गया और एक दिन मेरे द्वारा पत्नी की हत्या हो गई। मुझे जेल भेज दिया गया। मैं अपनी ज़िन्दगी का सबसे सौभाग्यशाली दिन उसे मानता हूँ जब मुझे परमात्मा का परिचय और उनके धरती पर अवतरित होने का शुभ-समाचार इस जेल में प्राप्त हुआ। दुख ही समाप्त हो गए। ज्ञान में पहले दिन से ही मेरा अटूट निश्चय हो गया। मैं पहले किसी भी धार्मिक गतिविधि से परे था। कहा जाता है कि गीली मिट्टी को किसी भी तरह ढाल सकते हैं, वही मेरे साथ हुआ। प्रभु ने मुझे जेल में ढूँढ लिया और मैं इस रास्ते पर पूरी दृढ़ता व लगन से लग गया। जेल में सेवार्थ आने वाले ब्रह्माकुमार भाई व बहनों के मन, वचन, कर्म की श्रेष्ठता व नि:स्वार्थ सेवा की छाप मेरे ऊपर ऐसी पड़ी कि मेरे मन, बुद्धि, संस्कार ही बदल गए। अज्ञानतावश पले हुए विकार स्वत: ही मेरे से दूर हो गए। शिवबाबा की याद से अब व्यर्थ पर मैंने काफी काबू पा लिया है। अब ड्रामानुसार आई हुई कोई भी परिस्थिति मुझे दुखी नहीं करती। शिवबाबा की सच्ची याद व साथ से हम आत्माओं को बेहद की प्राप्ति हो सकती है, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है। मैंने ज्ञान में आने से यह अनुभव किया है कि भगवान हमसे दूर नहीं है। हम बाबा के सपूत बच्चे बनकर रहें और मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्र बनकर श्रीमत पर चलते हुए शिवबाबा की याद में रहें तो माया अर्थात् पाँच विकार हमें परेशान नहीं कर सकते।

मुझे अनुभव हो रहा है कि मैं ईश्वरीय परिवार का ही हूँ। मैं चारों विषयों – ज्ञान, योग, धारणा, सेवा में निपुण हो रहा हूँ और अमृतवेले तीन बजे से चार बजे तक योग में रहता हूँ। ऐसा लगता है, शिवबाबा हमारी अच्छी तरह गुप्त पालना करते रहते हैं। आध्यात्मिक क्षेत्र में बहुत आगे जाने का मेरा लक्ष्य है। अब तो केवल ईश्वरीय ज्ञान ही मेरी ज़िन्दगी, मेरा श्वास और मेरा उद्देश्य है। उसके बिना तो मैं जीने की बात सोच भी नहीं सकता। अब तो दिल यही गाता है – 'हमने प्यार वो पाया जो दुनिया पा नहीं सकती।' ❖

प्रश्न हमारे, उत्तर आपके

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्नः- क्या शारीरिक सौन्दर्य भी हमारे कर्मों के कारण होता है? किसी की तरफ हमारा मन प्रभावित होता है तो क्या उसका कारण भी हमारे पिछले कर्म हैं?

उत्तरः- कलियुगी मनुष्य की आदत है, या तो उसे चमड़ी चाहिए या दमड़ी चाहिए। जब ज्ञान-योग आ जाता है तो हम समझ जाते हैं कि चाहे कोई काला हो या गोरा हो, हमें तो आत्मा से काम है, उसके गुणों से काम है। हमें ना तो किसी से प्रभावित होना है, ना किसी को नफरत की निगाह से देखना है। मेरे से प्रश्न पूछा गया कि तुम भगवान के पास क्यों आई? मैंने कहा, मुझे लोग कहते थे, तुम्हारी सूरत अच्छी नहीं है, तुम्हारा मुँह बड़ा है, तुम छोटे कद वाली हो। देखो, मनुष्य कितने देह अभिमानी हैं! मुझे लोग अच्छे नहीं लगते थे। सारा दिन मनुष्य खास लड़कियों को ही देखते थे। पढ़ी हुई कितनी है, शक्ल कैसी है, मेकअप कैसा करती है। मुझे कोई मनुष्य अच्छा नहीं लगता था। मैंने सोचा, लड़की होना मुसीबत हो गई। तो अंदर से भगवान को कहती थी, भगवान मुझे कोई इंसान नहीं चाहिए। लोग यही देखते हैं कि पैसा कितना है इसके माँ-बाप के पास। छोड़ो इंसानों को, भगवान के पास आई तो उसने तो झट से मुझे प्यार किया, जैसी हो, मेरी हो। भगवान इतना प्यार करता है। उसने कभी नहीं कहा, ऐसी हो, वैसी हो। मैंने भी कहा, जैसी हूँ, कैसी हूँ, तेरी हूँ। मैं सबको अच्छा देखती हूँ तो सब भी मुझे अच्छा देखते हैं।

प्रश्नः- जीवन में कोई दुख इतना है कि हमसे सहन नहीं होता। बहुत गहराई तक वह चला गया है, अंदर के दुख और बाहर के भय को कैसे खत्म करें?

उत्तरः- भय भी तो अंदर ही होता है परंतु आता बाहर से है। किसी ने मेरे पर गुस्सा किया, कोई नाराज़ हो गया तो जैसे अंदर भय बैठ जाता है। घड़ी-घड़ी वो बात ख्याल में रहेगी। बाबा हमेशा कहता था, किसी ने किसी पर गुस्सा किया तो वह बात छह महीने तक भूलती नहीं है। डर लगता है कि मैं बात करूँ तो कहीं वह गुस्सा न करे। जब ज्ञान की गहराई में जाते हैं तो महसूस होता है कि भय भी देह-अभिमान की निशानी है। भय इंसान को क्यों होता है? जब खुद पापकर्म करता है तो अंदर भय होता है। कोई दूसरा मेरे से ऐसा व्यवहार करता है तो मेरे अंदर इतनी सत्यता की शक्ति हो, मैं डरूँ क्यों? डर के मारे मैं संबंध क्यों बिगाड़ूँ? डर के मारे मैं झूठ बोलूँ, छिपाऊँ, ऐसा कर्म नहीं करूँ। नहीं तो भय और बढ़ता रहेगा। दुख के कारण भय है, भय के कारण दुख होता है। किसी से भी इंसान डरता है तो सदा ही दुखी रहता है। भय बड़ा नुकसानकारक है। इसलिए मैं कहती हूं, न मैं किसी से डरूँ, न डराऊँ, यह भी ध्यान रखना होगा। यदि किसी से कोई डरता है तो यह भी कमज़ोरी है। कोई पावरफुल नेचर वाला डराता है कि जैसे मैं चाहूँ वैसा तुझे करना पड़ेगा। कोई डर के कारण अच्छा कर्म करे, मर्यादा पर रहे। नहीं, डर के मारे नहीं। अच्छी बात समझकर करे, सच्चाई और प्रेम से करे, अपना भी कल्याण समझे तो दूसरों का भी

समझे, तो भय नहीं रखना चाहिए। भय नुकसानकारक है। भय अन्य विकारों को भी अंदर छिपाकर बिठा लेता है। सत्यता को प्रत्यक्ष करने में भय रोकता है। अपना स्वरूप बनाने में और दूसरे के सामने उसे रखने में भय रोकता है, इसलिए मैं किसी भी हालत में भय को अंदर से निकालूँ। ग्रंथ साहिब में है –'अकालमूर्त, निर्भय', जब अपने को आत्मा समझूँगी तो निर्भय बनूँगी क्योंकि आत्मा को तो काल नहीं खाता। मनुष्य को तो मृत्यु का भय होता है। इंसान, इंसान के अधीन होता है तो भी भय होता है। भय अच्छा चिंतन नहीं करने देगा। ईश्वरीय चिंतन में रहने नहीं देगा। सर्वशक्तिवान से शक्ति खींचने नहीं देगा इसलिए मैं सर्वशक्तिवान से शक्ति खींचकर निर्भय रहूँ। मैं सबके साथ संबंध अच्छा रखने की शक्ति लेकर निर्भय रहूँ। मेरे वचन में सत्यता की शक्ति हो तो मुझे कोई भय नहीं। दूसरा कोई कुछ करेगा तो असर नहीं होगा।

प्रश्नः- कई बार मुझे ऐसे सपने आते हैं कि मैं युद्ध के मैदान में हूँ, चारों तरफ खून है और सिपाही हैं। तो क्या यह भी पूर्व के कर्मों के कारण होता है? किस युक्ति से इस प्रकार के स्वप्न बंद हो सकते हैं?

उत्तरः- जैसे-जैसे संकल्प और संस्कार शुद्ध होते जाते हैं, भय दिलाने वाले स्वप्न आने भी बंद हो जाते हैं। संसार का वातावरण ऐसा है इसलिए इस प्रकार के स्वप्न आते हैं। इसमें डरने की जरूरत नहीं है। और ही ऐसे स्वप्न देखकर हमें बहादुर बन जाना है। दिन-भर में हमारा जैसा संबंध, व्यवहार और कर्म होता है, वैसे ही स्वप्न होते हैं परन्तु कई बार ऐसे स्वप्न भी होते हैं जिनका रोज़ के जीवन से कोई संबंध नहीं होता, उनका संबंध पूर्व कर्म या पूर्व जीवन की घटना से भी हो सकता है। स्वप्न पर चिन्तन न करें। हम तो स्वप्न में ईश्वरीय ज्ञान, योग या सेवा के दृश्य ही देखते हैं।

प्रश्नः- प्लैन को प्रैक्टिकल करने का आत्मविश्वास कैसे आए?

उत्तरः- जब ऊँची मंज़िल पर जाना है, पढ़ाई में पास होना है तो निराश कभी नहीं होना है। हिम्मत, उमंग, उल्लास को सदा साथ रख, जो गलती महसूस की है, वह दुबारा न हो, आगे के लिए खबरदार, होशियार हो जायें तो हम अच्छे बन सकते हैं। किसी भी हालत में आज तक ना खुद से नाउम्मीद हुए हैं, ना किसी और से हुए हैं। नाउम्मीद कभी नहीं होना है। हिम्मत के साथ उम्मीद रखनी है। गलतियाँ जो हुई थीं, वे बीत गईं। जो हम चाहते हैं, वो कर सकते हैं। पुरुषार्थ में सदा जुटे रहना है। हमारी स्टूडेन्ट लाइफ है। हम राजयोगी, सच्चे, अच्छे एग्जाम्पल दुनिया के लिए बनना चाहते हैं। हम सुस्ती, गफ़लत को छोड़ दें तो जो चाहें वो कर सकते हैं।

प्रश्नः- कई देशों में बहुत गरीबी और भूखमरी है तो अवश्य ही सामूहिक रूप में उनके ऐसे कर्म रहे होंगे। उन लोगों के प्रति हमारी क्या ज़िम्मेवारी है?

उत्तरः- दुनिया के हर कोने में कभी हिंसा के कारण, कभी गरीबी के कारण दुख होता ही रहता है, इसमें हमारी ज़िम्मेवारी क्या है? दुखी को देखकर दुखी होना हमारी ज़िम्मेवारी नहीं है। अगर बीमार को देखकर डॉक्टर भी दुखी जैसा चेहरा बना लेता है तो उस बीमार का इलाज कोई नहीं कर सकता। वह डॉक्टर ऑपरेशन नहीं कर सकता। लेकिन डॉक्टर जानता है कि यह क्या बीमारी है, मुझे क्या करना है, तो मदद करता है। मन में दुखी नहीं होता है लेकिन दुखी का दुख दूर करने का पुरुषार्थ करता है। इसी प्रकार से हम भी यदि हिंसा और भूखमरी का बार-बार चिन्तन करेंगे तो उससे इतना फायदा नहीं हो सकता। लेकिन आपसी प्रेम बढ़ाने के लिए अच्छे वायब्रेशन फैलायें। आपने देखा होगा, किसी दुखी के दिल की बात प्यार से सुन लो तो भी उसका आधा दुख दूर हो जाता है। उसको जो चीज़ ज़रूरी चाहिए, उसमें मदद करो तो भी आधा दुख दूर हो जाता है। दुखियों को देखकर हमें तरस अवश्य आता है पर दुखी होने की बजाय दुखहर्त्ता परमात्मा की याद से शांति और प्रेम का वातावरण फैलायें ताकि अंदर में जो दुख की बहुत महसूसता है वह कम हो जाये।

पुरुषोत्तम संगमयुग एवं धर्म, राज्य और भाषा के विस्तार का कारोबार

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

परमात्मा द्वारा स्थापित इस विश्व विद्यालय में परमपिता शिव परमात्मा हमें इतिहास, भूगोल, तत्वज्ञान आदि-आदि बातें सिखाते हैं जो कल्पवृक्ष के चित्र के ऊपर स्पष्ट रूप से लिखी हुई हैं। परमात्मा ऐसे सहज रूप में हमें इतिहास सिखाते हैं कि मालूम ही नहीं पड़ता कि इतिहास के दृष्टिकोण से ये शिक्षायें मिल रही हैं, जैसे कि 28 फरवरी 2010, होली की अव्यक्त मुरली में शुरू में शिव बाबा ने दो बातें बताई हैं, (1) इतना बड़ा भाग्य सारे कल्प में और किसका भी नहीं होता (2) सारे कल्प में चक्र लगाके देखो कोई धर्मात्मा भी डबल पवित्र नहीं बना है।

इसी प्रकार से, दिल्ली के भाई-बहनों से बात करते हुए शिव बाबा ने कहा, 'जमुना का किनारा तो दिल्ली में ही है। राजधानी भी अपनी जमुना किनारे होनी है। तो दिल्ली वालों को सभी को स्थान देना पड़ेगा।' इस प्रकार इतिहास के बारे में भी और धर्मस्थापकों के जीवन-व्यवहार के बारे में भी सिखाते हैं।

यह तो हम बच्चों ने जान लिया है कि सतयुग में एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा, एक परिवार होगा और इसकी स्थापना संगमयुग में परमपिता परमात्मा द्वारा होती है। संगमयुग में ज्ञान लेने से पहले हम सब अलग-अलग परिवारों में बँटे हुए थे, हमारी भाषायें अलग-अलग थीं, धर्म-भेद भी हम सबमें था और अलग-अलग देशों के हम सब नागरिक थे। ऐसी अनेकता में एकता परमपिता परमात्मा ला रहे हैं। इससे सिद्ध होता है कि परमात्मा का कर्त्तव्य कितना दिव्य और महान है जो संगमयुग के छोटे-से युग में 84वें जन्म में परमात्मा सहज एकता कर दिखाते हैं और श्रेष्ठ सतयुगी सृष्टि का निर्माण करके उसका कारोबार संभालने के निमित्त हम बच्चों को बनाकर, खुद निवृत्त हो जाते हैं।

सतयुग और त्रेतायुग का तो इतिहास इतना प्रसिद्ध नहीं है। एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा और एक परिवार से धीरे-धीरे कैसे सब बातों में अनेकता आती है, इसके बारे में हम बच्चों को थोड़ा विचार सागर मंथन करना चाहिए।

शुरू में संस्कृति की स्थापना या कहें सतयुग की स्थापना का कारोबार गंगा, यमुना के तटवर्ती प्रदेशों में हुआ, बाद में कारोबार फैलता गया। रघुवंश में लिखा है कि राजा दशरथ के जो चार पुत्र – राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न थे, उनके बेटों को हरेक को राजगद्दी मिले और हरेक की राजधानी हो, इसके लिए रामराज्य के राजकारोबार को विभाजित किया गया। पहले राजकारोबार एक ही राजा राम के हाथ में था, बाद में विभाजित किया गया। इस प्रकार परिवार बढ़ने से, हरेक बच्चे को राजाई मिले, उसके लिए राज्य कारोबार का विस्तार होने लगा, यह हकीकत है।

एक से ज्यादा राजकुमार होने पर, राज्य में हदों का निर्माण हुआ। शुरू में तो प्रेम-प्यार से व्यवहार होता था, बाद में हरेक ने अपने राज्य की समृद्धि बढ़ाने के लिए कदम उठाए और उसी के कारण मेरा राज्य, इस प्रकार मैं-मैं का कारोबार शुरू हो गया।

राज्य विस्तार के लिए हम सब जानते हैं कि कलियुग में, मध्य एशिया से भारत पर अन्य धर्मों के लोगों ने आक्रमण किया। शुरू में तो आक्रमणकारी अतुल धन-संपदा

लेकर अपने देश में चले गए जैसे महमूद गजनवी, मुहम्मद गौरी, चंगेज खान आदि-आदि। बाद में इन राजाओं ने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए युद्ध करके भारत के राजाओं को हराकर भारत में अपना राज्य प्रस्थापित किया और उसी से ही मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। मुगल सम्राट जहांगीर के राज्य दरबार में ही अंग्रेजी हुकूमत के लोग भारत के साथ व्यापार करने का लाइसेन्स लेने के लिए आये और व्यापार के नाम पर भारत में उन्होंने अपना अड्डा जमाकर भारत में ब्रिटिश राज स्थापित किया।

दक्षिण भारत में मुगल साम्राज्य के दिनों में ही शिवाजी महाराज ने भी अपना मराठा राज्य स्थापन करने का प्रयास किया और उसके कारण औरंगजेब को अनेक वर्षों तक दिल्ली छोड़ कर दक्षिण भारत में ही रहना पड़ा और इसी कारण उन्होंने अपनी दूसरी राजधानी दक्षिण भारत में प्रस्थापित की। शुरू में तो मराठा साम्राज्य के शिवाजी महाराज बहुत अच्छी तरह से कारोबार करते रहे। मराठा साम्राज्य के संचालन के लिए उन्होंने बड़ौदा, इन्दौर तथा ग्वालियर में सूबेदारों की नियुक्ति की परंतु बाद में पूणे में उनकी उत्तराधिकारी जो पेशवा सरकार थी, वो इतनी ताकत वाली नहीं रही, जिस कारण वे सूबेदार खुद ही राजा बन गए और मराठा राज्य का विभाजन हुआ। परिणामरूप, वे अंग्रेज़ सत्ता के प्यादे बन गए। इस प्रकार राज्यों का विस्तार होने से भारत के अंदर तथा भारत के बाहर भी भारत की संस्कृति तथा सभ्यता का विस्तार होने लगा। पश्चिम में इजिप्त अर्थात् मिश्र, फिर वहाँ से ग्रीस और उसके बाद रोम में भी इसी संस्कृति का विस्तार होने लगा। इजिप्त में पिरामिडों की संस्कृति बनी, ग्रीस में तत्वज्ञान की, रोम के बादशाहों ने अपने साम्राज्य का विस्तार किया और रशिया में जार वंश के राजाओं का कारोबार चला, इस प्रकार से कारोबार सारी दुनिया में फैलता गया।

स्पेन का कोलंबस, भारत आने के बदले अमेरिका पहुँच गया और उत्तरी अमेरिका तथा दक्षिणी अमेरिका के देशों का पता किया। वहाँ की उपजाऊ ज़मीन और खनिज पदार्थों के अतुल भंडार के कारण वहाँ की समृद्धि बहुत बढ़ गई। सोना आदि वहाँ की खानों से बहुत निकलने लगा।

वास्कोडिगामा ने अफ्रीका का चक्कर लगाकर भारत का रास्ता ढूँढ लिया। बाद में अपना राज्य कारोबार भी किया जिसमें ज्यादा सफलता अंग्रेज़ों को मिली, थोड़ी सफलता फ्रांस एवं पुर्तगाल को भी मिली।

धीरे-धीरे अफ्रीका, उसके बाद ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में भी लोग जाकर बसने लगे। यूरोप से ऐसे लोगों को बन्दी बनाकर ऑस्ट्रेलिया भेजा गया जो यूरोप के अंदर अशान्ति फैला रहे थे। इस प्रकार वहाँ जनसंख्या की वृद्धि कराई गई। भारत से भी कई लोगों को खेती आदि करने के लिए मॉरिशियस, वेस्ट इंडीज आदि देशों में लेकर गये।

राज्य विस्तार के साथ-साथ नये-नये धर्मों की स्थापना भी हुई जैसे कि मोजेज द्वारा यहूदी धर्म, इब्राहम द्वारा इस्लाम धर्म, मोहम्मद पैगम्बर द्वारा मुस्लिम धर्म आदि-आदि। भारत की संस्कृति के साथ इन सबका अच्छा संबंध था। राम, सीता और लक्ष्मण के भित्ती चित्र *(Wall Painting)* आदि आज भी रोम में मिलते हैं। यहूदी धर्म के स्थापक मोजेज का बड़ा भाई जिसका नाम रामसे था अर्थात् राम से संबंधित था, उनके जीवन के बारे में वर्णन आता है कि उन्होंने मिश्र देश में नील नदी के किनारे मंदिर बनाया। इस तरह से धर्मों की भी स्थापना होती रही और जैसा कि अव्यक्त बापदादा ने बताया है कि हम बच्चे जो कल्पवृक्ष के तने में हैं, हमारे ही द्वारा अन्य सभी धर्मों की शाखायें निकली और उनकी वृद्धि हुई है।

मैंने पहले भी ज्ञानामृत में लिखा है कि जब दादी पुष्पशांता की बेटी सुशीला ने अपने ट्रस्ट के कारोबार के ऑफिस को कोलाबा सेवाकेन्द्र पर

स्थापित करने का प्रस्ताव रखा तब मैंने अव्यक्त बापदादा से पूछा था कि हमारे सेवाकेन्द्र से, संन्यासिनी बनी हुई सुशीला बहन के यहाँ ट्रस्ट का कारोबार कैसे हो सकता है। तब अव्यक्त बापदादा ने संदेश में यही कहा था कि द्वापर युग के बाद जो विभिन्न धर्म प्रस्थापित होंगे उनके उद्‌भव के निमित्त आप सब बच्चे ही बनेंगे। आपके द्वारा ही उनको जन्म मिलेगा और फिर वे अपना कारोबार अलग से करेंगे। इस प्रकार से धर्मों की भी स्थापना होती रही फिर धर्मों में भी विभाजन होता रहा जैसे इस्लाम धर्म के शिया और सुन्नी दो पंथ बन गये। कई धर्मों जैसे मुसलमान धर्म ने, अन्य धर्म के लोगों को आकर्षित करने के लिए कई नये प्रकार के कर्मकाण्ड बनाये। पुरुष प्रधान संस्कृति को बढ़ावा मिले इसलिए एक पुरुष को चार स्त्रियों के साथ शादी की छूट दी। भारत में निज़ाम राज्य के मुसलमान राजा ने भी अपने राज्य में मुसलमानों की संख्या बढ़े इसलिए पाँच स्त्रियों के साथ विवाह की स्वीकृति दी।

कई धर्मों का लक्ष्य रहा, अन्य धर्म के लोगों का धर्मान्तर कराकर अपने धर्म में लाना। मिसाल के तौर पर सन् 1971 में विदेश सेवा के दौरान हम शिकागो में ईसाई धर्म की एक संस्था में गये। उन्होंने एक रिपोर्ट बनाई थी कि अन्य धर्म के लोगों का धर्मान्तर अपने धर्म में उन्होंने कितना किया। उन्होंने हमसे भी पूछा कि आपकी संस्था ने कितने लोगों को कन्वर्ट किया है। तब हमने कहा कि परमपिता द्वारा स्थापित इस विश्व विद्यालय में एक धर्म से दूसरे में कन्वर्ट करने का हम प्रयत्न नहीं करते बल्कि हम चाहते हैं कि बुरे इंसान का अच्छे इन्सान में परिवर्तन हो। तब उन्होंने यही सवाल पूछा कि इससे आपको क्या फायदा, आपकी संस्था कैसे बढ़ेगी?

इसी प्रकार, जहाँ-जहाँ लोग गए, वहाँ उन्होंने विचारों को व्यक्त करने के लिए भाषाएँ निर्मित की। भारत में दो राष्ट्र भाषायें हैं। वर्तमान समय भारत में 1,618 भाषायें, 6400 जातियाँ हैं। कहाँ सतयुग का एक धर्म, एक भाषा और कहाँ आज भारत में इतनी भाषायें, इतने धर्म और इतनी जातियाँ बन गई हैं।

हमने इस लेख में सतयुग के एक धर्म, एक भाषा और एक परिवार का विभाजन होते-होते वैश्विक स्तर पर कितना विस्तार हुआ, उसे सार में लिखने का प्रयत्न किया है। इतने धर्म, राज्य, परिवार, भाषा में विभाजित इस विश्व को एक राज्य, एक भाषा आदि के रूप में कैसे परमात्मा परिवर्तन करते हैं, इस बात को हम समझें तब हमें परमात्मा के दिव्य कर्त्तव्य की सच्ची महिमा समझ में आती है। हम परमात्मा के ऐसे दिव्य और श्रेष्ठ कर्त्तव्य को विश्व के आगे प्रत्यक्ष करें तभी सारा विश्व एक ही पिता परमात्मा को अपना पिता मानने को तैयार होगा। इस कार्य के लिए जो थोड़ा-सा समय हमें मिला है, उसी में इसे करना है इसलिए शिव बाबा ने हम बच्चों को उड़ती कला के पुरुषार्थ द्वारा ईश्वरीय ज्ञान और राजयोग को प्रसिद्ध करना सिखाया है। शिव बाबा की इस उम्मीद को उम्मीद के सितारे बनकर पूरा करना हम ईश्वरीय संतानों का फर्ज है। ❖

भगाइये क्रोध... पृष्ठ 1 का शेष

जो व्यक्ति दूसरों को कुछ दान करता है, उसे 'दानी' कहा जाता है और जो व्यक्ति समझदार नहीं होता, उसे 'नादान' कहा जाता है। परंतु परमपिता परमात्मा कहते हैं कि जो व्यक्ति क्रोध का दान नहीं करता, वही 'नादान' (दान न करने वाला) है, इसलिए उसका कल्याण भी नहीं होता। जो मनुष्य चाहता है कि मेरा कल्याण हो, उसे अब परमात्मा को क्रोध का दान दे देना चाहिए। ❖

गतांक से आगे..

स्वर्ग का द्वार है नारी

• ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

(पिछले अंक में हमने नारी के अनेक महिमामय गुणों को जाना, अब पढ़िए नारी की अन्य खूबियाँ ..सम्पादक)

कष्ट सहिष्णुता

नारी, मानव का निर्माण करती है। इस प्रक्रिया में उसे कई कष्टों का सामना करना पड़ता है पर हर कष्ट को चुनौती के रूप में स्वीकार कर वह अपने कार्य में लगी रहती है। गर्मी-सर्दी, अभाव, बीमारियाँ सब कुछ पार कर जाती है। संतान के सुख के लिए मुख का निवाला, रात की नींद, मौज-शौक और इच्छायें सब त्याग देती है। उसमें स्वाभाविक त्याग-वृत्ति है। यही त्यागवृत्ति ईश्वरीय कर्त्तव्य में भी काम आती है। आध्यात्मिक ज्ञान के द्वारा वह बेहद की जगतमाता भाव को धारण कर लेती है। विश्व भर की आत्माओं की आध्यात्मिक, नैतिक पालना के लिए वह बड़ी-बड़ी बाधाओं से भी टकरा जाती है। विपरीत परिस्थितियों में भी मूल्यों की पतवार संभाले रहती है।

कमीशन और उपहार का आकर्षण

नारी, घर को बड़ी बचत भावना से चलाती है। पैसे को संभाल-संभाल कर, बचा-बचाकर प्रयोग करती है। धन की बचत के लिए, रियायती दर पर चीज़ें मिलती हों तो लेने का मौका नहीं चूकती। सस्ती स्कीम, सेल, कमीशन या उपहार आदि की योजनाओं का उसे विशेष ध्यान रहता है। वर्तमान समय स्वयं परमात्मा पिता ने ईश्वरीय-ज्ञान की नि:शुल्क योजना चलाई है। ऋषि-मुनियों को कठोर तप करने के बाद जो सत्य ईश्वरीय ज्ञान उपलब्ध नहीं हुआ, वह इस योजना के तहत घर बैठे, बिना किसी तप और कष्ट के सहज मिल रहा है। नि:शुल्क ज्ञान की तरफ अपनी स्वाभाविक मनोवृत्ति के कारण महिलायें आकर्षित होकर, भागवत् प्रसिद्ध गोपिकाओं की तरह ईश्वरीय प्यार, गुण, शक्तियों से मालामाल हो सकती हैं।

समा लेने का संस्कार

नारी में समा लेने का संस्कार होता है। यदि उसका पुत्र, भाई, पति कोई ग़लत कार्य कर ले तो दिल में समाकर, भगवान से प्रार्थना करती है कि वह उसे सद्बुद्धि दे। आध्यात्मिक नारी के लिए फिर सारी दुनिया के लोग पुत्र या भाई तुल्य हो जाते हैं, वह उनकी भी ग़लती को फैलाने के बजाय, उस गलती से उन्हें छुड़ाने में भरसक मेहनत करती है। परमात्मा पिता की मधुर याद और अपनी शुभभावनाओं से सींच-सींच कर उनकी आत्मा को बलवान बना देती है जिससे वे उस बुरे संस्कार से छूटने का बल प्राप्त कर लेते हैं।

लक्ष्मी रूप

सतयुग में राजकुमारी राधा का, शादी के बाद महारानी लक्ष्मी नाम पड़ता है। उसी प्रथानुसार आज भी शादी होते ही नारी को लोग गृहलक्ष्मी के रूप में सम्मान देते हैं पर सही अर्थों में उसका लक्ष्मी रूप आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा ही निखरता है। जहाँ भौतिकता हमारे दायरे को गिने-चुने रिश्तेदारों और सहेलियों तक समेट देती है वहीं आध्यात्मिकता हमारी पहुँच सारे विश्व तक बना देती है। जैसे लक्ष्मी के दरवाज़े पर कोई भी भक्त, किसी भी धर्म, जाति, कुल, भाषा, रंग, देश का कभी भी आ सकता है, उसी प्रकार आध्यात्मिक ज्ञान से विभूषित नारी में यह गुण आ जाता है कि उसके द्वार पर कोई भी, कभी भी आये, वह ज्ञान-रत्नों से उसकी झोली अवश्य भरेगी। कहा जाता है कि देना, लेना होता है और लेना, देना होता है। देने वाला कभी खाली नहीं होता। लक्ष्मी के एक हाथ से पैसे बरस रहे हैं और दूसरे हाथ से आशीर्वाद बरस रहे हैं, फिर भी आज तक ना तो वे पैसे से गरीब बनीं और ना ही आशीर्वाद से। अत: सर्व प्राप्तियों का आधार है देना। आध्यात्मिक नारी

कभी यह नहीं कह सकती कि अमुक लोग मेरी सुनवाई नहीं करते, ना ही वो यह कह सकती है कि मुझे थोड़ा पैसा दे दो या मेरे से थोड़ा मीठा बोलो। नहीं, वह आत्मा को संवार कर सर्व समस्याओं का समाधान कर लेती है। मंदिर की देवी सदृश दूसरों को अपने अनुकूल बना लेती है।

आत्मावलोकन

नारी, घर के सामान की जब-तब सूची बनाती है कि क्या-क्या समाप्त हो गया और क्या-क्या मंगवाना है। इसी प्रकार वह जीवन के मूल्यों की भी सूची बनाए कि मेरे में कौन-कौन से मूल्य समाप्त हो गये हैं। क्या मेरे मन के स्टोर में निर्भयता है, क्या सहनशीलता का पूरा स्टॉक है? एकाग्रता, संतुष्टता, पवित्रता, उमंग-उत्साह, नम्रता, सहयोग, हर्षितमुखता का स्टॉक भी चेक करे। यदि ये गुण नहीं हैं तो इनको भी जल्द से जल्द भरे। हम वस्तुओं के नहीं, इन गुणों के मालिक हैं। वस्तुएँ और व्यक्ति भगवान को अर्पित कर देने से ये सभी गुण हमारे आगे अर्पित हो जाते हैं। चीज़ की कीमत नहीं होती, हमारे शब्दों की कीमत होती है। पाई-पैसे की चीज़ के लिए कीमती शब्दों को व्यर्थ गंवाने की कोई ज़रूरत नहीं होती। पाई-पैसे की चीज़ तो हमारे जाने के बाद ठोकरों में रुलेगी पर हमारे बोल, कर्म हमारे साथी बने रहेंगे। तो ठोकरों में रहने वाली चीज़ों के लिए, सदा के साथी बोल और कर्म को क्यों बिगाड़ा जाये?

सौन्दर्य पिपासा

नारी सौन्दर्य-पसंद होती है। स्वयं को सुन्दर बनाकर रखना चाहती है। सौन्दर्य की इस लालसा ने ही जगह-जगह ब्यूटी पार्लर खुलवाये हैं। इस अल्पकाल के सौन्दर्य की प्राप्ति के लिए वह पैसा, समय और शक्ति नि:संकोच खर्च कर देती है पर अफसोस यह है कि यह अल्पकालीन सौन्दर्य, पानी या पसीने के हलके से छींटे से ही तितर-बितर हो जाता है। तो नारी क्या करे? स्थायी सौन्दर्य कहाँ से लाये? अध्यात्म है स्थायी सुन्दरता का आधार। गुणों के द्वारा व्यक्तित्व में जो चमक आती है, वह स्थायी होती है। समय या परिस्थितियों की धूल उसे गंदा नहीं कर सकती। सजने-सजाने का यह संस्कार भी अध्यात्म में बहुत काम आता है। बाहरी सौन्दर्य से हटकर अब वह अपने आत्मन का ईश्वरीय गुणों से यूँ शृंगार करती है –

1. मांग में परमधाम की लाली की स्मृति
2. मस्तक पर आत्म-तेज का तिलक
3. आँखों में पवित्र दृष्टि का कजरा
4. कानों में ज्ञान-रत्नों के कर्णफूल
5. नाक में स्वमान की नथ
6. होंठों पर मधुर मुसकान की लाली
7. गले में मधुर वाणी की कंठी
8. हृदय में एक प्रभु के प्यार का हार
9. कमर में साहस की तगड़ी (करघनी)
10. ईश्वर का दायाँ हाथ बनने के बाजूबंद
11. ईश्वरीय मर्यादाओं का कंगन
12. ईश्वर से मन की सगाई की अंगूठी
13. सच्चाई की मेहंदी
14. श्रेष्ठ चाल-चलन की पाजेब
15. बीस नाखूनों का जोर लगाकर कर्मातीत बनने की नेलपॉलिश
16. प्रभु के पग पर पग रख अनुकरण करने के बिछुए

यही आंतरिक शृंगार कालांतर में सोलह कला संपन्न दैवी पद का आधार बनता है।

सादा जीवन, उच्च विचार

अंदर से आत्मा का शृंगार, बाहर से सादा जीवन और उच्च विचार – यही है ईश्वर पिता की दिलतख्तनशीन नारी की पहचान। ऐसी नारी कहेगी –

''जब से जीवन में रूहानियत और सद्गुण आये हैं, मुझे लग रहा है कि दुनिया की कोई चीज़ मुझे अप्राप्त नहीं है। मुझे गर्व है ऐसा जीवन देने वाले परमात्मा पर जिसने मुझे इतना समर्थ बना दिया। दुख को मैं जानती नहीं हूँ, अशांति और तनाव मेरे शब्दकोष में नहीं हैं, प्यार, सुख, हँसी, खुशी, आनन्द को लिए मैं जीवन में आगे बढ़ रही हूँ। ये चीज़ें

(शेष..पृष्ठ 26 पर)

'पत्र' संपादक के नाम

जनवरी 2010 अंक पढ़कर ऐसा लगा जैसे बाबा से ही मुलाकात हुई। बाबा की स्मृतियाँ पत्रिका के प्रत्येक पन्ने पर संचित थी। आत्मा में नर और नारी दोनों के संस्कार होते हैं, यह पढ़कर मुझे बल मिला। वास्तव में यह पत्रिका ज्ञान का अमृत है, इसे प्रत्येक व्यक्ति को पढ़ना चाहिए।

– साधना शर्मा,
गिरी नगर (हि.प्र.)

दिसंबर 09 अंक में 'पवित्रता' लेख बहुत अच्छा लगा। वास्तव में पवित्रता ही सुख-शान्ति की जननी है। गीता में भी लिखा है, काम महाशत्रु है। शिवबाबा ने ब्रह्मा के मुख द्वारा शब्द उच्चारे हैं 'पवित्र बनो, योगी बनो।' पवित्रता वास्तव में मन, वचन, कर्म, संबंध-संपर्क में रहनी अति आवश्यक है। अशान्ति, दुख, क्लेश व अप्राप्ति का कारण अपवित्रता ही है।

– ब्र.कु.सतीश सक्सेना,
लक्ष्मी नगर, दिल्ली

मैं ज्ञानामृत का नियमित पाठक हूँ। यूँ तो ज़िन्दगी में मैंने बहुत सारी पत्रिकायें पढ़ी पर ज्ञानामृत तो नि:संदेह बेमिसाल है क्योंकि इसका आधार सर्वशक्तिवान की वाणी है। इस पत्रिका से जीवन में अवर्णनीय परिवर्तन आया। दिसंबर 09 में छपा 'अनुभव करो' लेख शिव बाबा की हम बच्चों के प्रति बेइंतहा मोहब्बत की कसक व तड़प का एहसास कराता है। पत्रिका के हर अंक का बेसब्री से इंतजार रहता है। अगले अंक के बीच वर्षों का फासला लगता है।

– ब्र.कु.रतन कु. दास,
कुमारीकाटा, असम

ज्ञानामृत पत्रिका अमृत-तुल्य साबित हो रही है जिसे पढ़कर, जो जेल नर्क-सी अहसास हो रही थी, आज स्वर्ग-सी प्रतीत हो रही है और मन अक्सर यह गुनगुनाया करता है कि तेरे पास रहने को जी चाहता है, कभी भी न जाने को जी चाहता है।

कई लेख जैसे जुलाई अंक में 'बेहद की वैराग्य वृत्ति' व 'तलाश जो पूरी हो गई', अगस्त अंक में 'बरबादी से आबादी की ओर', सितंबर अंक में 'पुरुषोत्तम संगमयुग में कानून की मर्यादा और महिमा' व 'धर्मनीति और राजनीति का एक स्वर', अक्टूबर अंक में 'श्वेत की शान' तथा दिसंबर अंक में 'बलि किसकी' आदि-आदि पढ़कर मन बहुत ही प्रसन्न हुआ।

– ब्र.कु.रामानुज वर्मा,
सेन्ट्रल जेल, वाराणसी

नि :स्वार्थ भाव ही संगठन की मजबूती का आधार है

बाबा प्यार तुम्हारा

ब्र.कु. घमंडीलाल अग्रवाल, गुड़गाँव

सुंदर फूलों के उपवन–सा
जीवन बना हमारा
मन के आंगन जब से बरसा
बाबा प्यार तुम्हारा।।
क्रोध, लोभ, भय, अहंकार सब
जाने हैं किस ओर गये,
सांसों में संगीत समाया
मिले नित्य उपमान नये।
लगता जैसे खुद के ऊपर
है अधिकार हमारा।
मन के आंगन .....
जीना क्या होता है इसका
अर्थ समझ में आया
दुख की बंजर–सी धरती पर
सुख ने नीड़ बनाया।
ज्ञान आगमन से मुस्काया
यह घर–द्वार हमारा।
मन के आंगन .....
'मुरली' सुनकर हुए हैं दोऊ
कान सार्थक ऐसे,
प्यासे को अमृत की धारा
मिले अचानक जैसे।
संयम और विनय का पुरखा
अब आधार हमारा।
मन के आंगन .....
जो भूले, भटके, अटके हैं
उनको पथ दिखा दो
बुझे–बुझे जो दीप नयन के
ज्योति सब में ला दो।
पूरा विश्व कुटुम्ब एक हो
यही विचार हमारा।
मन के आंगन .....

गतांक से आगे..

परिस्थिति – वरदान या अभिशाप

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

कहावत है कि 'धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी। आपातकाल परिखहिं चारी' अर्थात् अपने अंदर कितना धीरज है, धर्मपरायणता कितनी है, मित्र साथ निभाने वाला है या नहीं एवं जीवन-साथी बुरे वक्त में कितना साथ देता है, इनकी परख आपातकाल में ही हो पाती है। दूसरे शब्दों में, कोई किस मिट्टी का बना है यह तो वक्त या परिस्थिति के आने पर ही पता पड़ता है।

एक बड़े धनाढ्य व धर्मपरायण सज्जन व्यक्ति थे जिनका समाज में उच्च स्थान था परन्तु उनका नौकर इतना बदतमीज़ था कि वह किसी के भी सामने अपने मालिक का अपमान कर देता था। एक बार शुभचिन्तकों के काफी पूछने पर उन्होंने बतलाया कि वे इस नौकर को इसलिए नहीं निकालते क्योंकि यह उनकी आध्यात्मिक प्रगति का साधन है। समाज में मेरा इतना ज़्यादा मान-सम्मान है कि मेरी आंतरिक शक्तियों को कार्य करने का कभी भी मौका नहीं मिलता। मेरी सहनशक्ति व निरहंकारिता का यह नौकर स्त्रोत है।

महान दार्शनिक सुकरात की पत्नी अत्यधिक कलहकारिणी थी। एक दिन जब सुकरात चिन्तन-मग्न थे तो वह उन पर 'यह कर', 'वह कर' की आज्ञा हांकने लगी। सुकरात को फिर भी ध्यानमग्न देख कर उसने गरज-गरज कर तूफान खड़ा कर दिया और अंत में गुस्से में गंदे पानी से भरा बर्तन उनके सिर पर पलट दिया। सुकरात ने हँसते हुए कहा कि 'आज यह कहावत गलत साबित हुई कि गरजते बादल बरसते नहीं हैं।' सुकरात ने परिस्थितियों के बीच रहते हुए ही ऐतिहासिक महानता प्राप्त की थी।

महाकवि मिल्टन ने नेत्रहीन होते हुए भी विश्व के प्रसिद्ध कवियों में अपना स्थान बना लिया। 'पैराडाइज लोस्ट' लिखने के लिए वे रोज़ सुबह चार बजे उठा करते थे। जितने भी महान काव्य या ग्रंथों की रचना हुई है, वे विभिन्न लेखकों द्वारा या तो जेल में रहते लिखे गये या फिर लंबे एकान्तवास के दौरान। मनुष्य जब शरीर से दुनियादारी में फँसा होता है तो उसके मन-बुद्धि कैद हो जाते हैं और जब वह शरीर से कैदी होता है तो मन-बुद्धि आज़ाद हो श्रेष्ठ चिन्तन व लेखन कार्य कराते हैं। थॉमस एल्वा एडिसन ने सैकड़ों आविष्कार किये। उनके सामने एक से बढ़कर एक परिस्थिति आई परन्तु उन्होंने उनकी उपेक्षा की और भीषण हलचल में भी लक्ष्य के प्रति डटे रहे।

हलचल परिपक्वता लाती है, अनुभवी बनाती है। यह टीचर बन पाठ पढ़ाती है। यह त्रिकालदर्शी व त्रिनेत्री बनाती है। यह माया के भिन्न-भिन्न स्वरूपों का अनुभव करा कर आगे के लिए सावधान करती है। परिस्थिति से यदि बहादुरी से निपटा जाये तो यह दो विशेष शक्तियों का अनुभवी बना कर जाती है, जो हैं – 'सहनशक्ति' व 'सामना करने की शक्ति।'

परमपिता शिवबाबा ने परिस्थिति का सामना करने के संबंध में कहा है – ''सदा अपने को मास्टर सर्वशक्तिवान अनुभव करते हो? इस स्वरूप की स्मृति में रहने से हर परिस्थिति साइडसीन अनुभव होगी। रास्ते के नज़ारों को देखकर खुशी होती है, घबराते नहीं। तो विघ्न, विघ्न नहीं है लेकिन विघ्न आगे बढ़ने का साधन है।'' मास्टर सर्वशक्तिवान कैसे बना जाये, इसकी युक्तियाँ 'सहज राजयोग' की नित्य लगने वाली कक्षाओं में सिखलाई जाती हैं। अचल से हलचल में आने के मुख्य तीन कारण शिव बाबा ने बतलाये हैं – ''अशुभ व व्यर्थ सोचना, अशुभ व व्यर्थ बोलना और अशुभ व व्यर्थ करना।''

गणेश को देवताओं में 'विघ्न

विनाशक' के रूप में जाना जाता है क्योंकि उन्होंने माया रूपी चूहे की सवारी की अर्थात् उसे परख कर अपने वश में किया। गणेश के ध्यानरत आधे खुले नेत्र व गंभीर मुख-मुद्रा से उनकी 'एकाग्रता' व 'शान्ति' का पता पड़ता है, जो फिर विघ्नों को परखने व उनका विनाश करने के लिए आवश्यक भी है।

देखा जाये तो परिस्थिति का अस्तित्व मनुष्यों की अपनी-अपनी सोच पर निर्भर करता है। जो बात किसी एक के लिए परिस्थिति है वह दूसरे के लिए एक सामान्य बात है। संसार में लाखों ऐसे अपंग मनुष्य हैं जिन्होंने अपनी लगन व मेहनत से वो मुकाम प्राप्त किये हैं जो अच्छे हृष्ट-पुष्ट व सुविधा संपन्न मनुष्य प्राप्त नहीं कर पाए हैं। उन्होंने 'परिस्थिति' को ही आगे बढ़ने का प्रेरणास्त्रोत बनाया और वह परिस्थिति उनके लिए एक 'वरदान' बन गई जबकि कई स्वस्थ लोग मानसिक अपंगता के कारण पीछे रह जाते हैं।

सहनशीलता, विवेकशीलता, कर्मठता

परिस्थिति का सामना करने में मुख्य रूप से तीन गुणों का सहयोग होता है: सहनशीलता, विवेकशीलता और कर्मठता (कर्म में प्रवीणता)। ये तीनों गुण किसी भी परिस्थिति के आने पर शक्ति में बदल कर उससे मुकाबला करते हैं। 'सहनशीलता' एक दिव्य गुण है जो परिस्थिति के आने पर धैर्य के गुण का सहयोग लेकर सहनशक्ति में बदल जाता है और मन को उग्र, चंचल व दुखी नहीं होने देता। सहनशक्ति से बुद्धि को स्थिरता व एकाग्रता प्राप्त होती है और वह 'विकार-अधीन (मलीन)' न होकर 'विवेकाधीन (स्वच्छ)' हो जाती है। बुद्धि गलत निर्णय भी दे सकती है परन्तु विवेकशील मनुष्य के निर्णय, विवेकशक्ति के आधार पर होते हैं जो सर्वदा सही होते हैं। यदि 'विवेक' जग जाये तो मनुष्य की आधी इच्छायें व परिस्थितियों का आधा वेग यूं ही समाप्त हो जाये। सहनशक्ति व विवेकशक्ति के साथ 'कर्मण्यता' अर्थात् पूर्व निर्धारित कर्म या दैनिक कर्म में तत्पर रहना आवश्यक है क्योंकि परिस्थिति या माया सबसे पहले मनुष्य को कर्म से अलग कर देती है। यदि कर्म चलता रहे तो परिस्थिति कमज़ोर पड़ जाती है। वैसे भी परिस्थिति होती ही है अल्प अवधि वाली परन्तु इसके वश में होकर कर्म से ठहर जाने पर यह अपने पैर पसार लेती है। कर्मण्य रहने की शर्त यह है कि कर्म में प्रवीणता अर्थात् कर्मठता हो। इतिहास में कर्मठ वे माने गये हैं जो ईश्वर को मानते हुए भी पूजा अपने काम की किया करते थे और महान कहलाये। कर्म में निपुणता व रुचि न होने के कारण ही 'कर्मण्येबाधिता' अर्थात् 'कर्म में बाधा' पैदा होती है। गीता में वर्णित 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' का अर्थ है – 'तेरा कर्म करने में अधिकार है।' परन्तु, उस परिस्थिति के अधीन होकर, जिसके आने, न आने पर मनुष्य का कोई अधिकार नहीं है, जब कर्म करने के अधिकार को छोड़ दिया जाता है तो परिस्थिति की अनाधिकृत प्रवेशता हो जाती है। वैसे भी जिस पर काम (कर्त्तव्य) का जुनून सवार रहता है, जिसे अपने काम के अलावा इधर-उधर की सुध लेने की भी फुर्सत नहीं, उसके पास परिस्थिति विरले ही आती है। (क्रमशः)

ग्लोबल हॉस्पिटल में महत्त्वपूर्ण चिकित्सा सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

घुटने व कूल्हे के जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा
(Regular Knee and Hip Replacement Surgery)
दिनांक : 23 से 26 अप्रैल, 2010
सर्जरी : डॉ. नारायण खण्डेलवाल, मुम्बई से कुशल व अनुभवी सर्जन
(Trained in U.K., Australia and Germany)
पूर्व जाँच के लिये केवल घुटने व कूल्हे के ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें –
डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, फोन नं. 09413240131
फोन: (02974) 238347/48/49 **फैक्स** : 238570
ई-मेल : ghrcabu@gmail.com **वेबसाइट** : www.ghrc-abu.com

डिप्रेशन : जानकारी और समाधान

'डिप्रेशन' विषय पर, बहन कनुप्रिया द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं ब्रह्माकुमारी शिवानी बहन तथा ब्रह्माकुमार डॉ. गिरीश पटेल भाई।

प्रश्नः- डिप्रेशन (अवसाद) क्या है?

उत्तरः- खुशी महसूस करने की योग्यता की कमी का नाम है अवसाद। हो सकता है, उसी परिस्थिति में 99% लोग खुशी महसूस करते हों पर वह व्यक्ति उस परिस्थिति में सुख को महसूस नहीं कर पा रहा है। आगे चलकर यह आत्महत्या की भावना तक भी व्यक्ति को ले जा सकता है।

प्रश्नः- जीवन-यात्रा का वह कौन-सा मोड़ है जब सुख होते हुए भी हम सुख का अनुभव नहीं कर पाते?

उत्तरः- खुशी आंतरिक अनुभूति है। इसे समय निकालकर अनुभव नहीं किया जाता और न ही किसी व्यक्ति या परिस्थिति का इंतज़ार किया जाता है कि वह हो तो खुशी मिले। आमतौर पर देखने में आता है कि हमने अपने जीवन में माइलस्टोन रख दिये हैं कि यह होगा तो खुशी मिलेगी, वे ऐसा कर देंगे तो खुशी मिलेगी परंतु अंदर यदि खालीपन है तो बड़ी से बड़ी प्राप्ति भी एक अल्पकालीन उत्साह निर्माण तो कर सकती है लेकिन आंतरिक खुशी नहीं। यदि लंबे समय तक खुशी गायब रही और तनाव बार-बार आता रहा तो अंदर का खालीपन इतना गहरा हो जाता है फिर बड़े से बड़ी प्राप्ति भी आंतरिक खुशी को पैदा नहीं कर पाती है।

प्रश्नः- जीवन में डिप्रेशन की विभिन्न अवस्थायें किस तरह से आती हैं?

उत्तरः- (1) ऊँची से ऊँची मानसिक अवस्था वो है जब आप जीवन के हर दिन, हर घड़ी सच्चा सुख अनुभव कर रहे हैं। यह करोड़ों में किसी व्यक्ति की होती है पर यह सच्ची खुशी की स्टेज है। (2) आप खुश हैं, अच्छा लग रहा है, यह अनुभूति भी गिने-चुने लोगों की होती है। (3) आप खुश हैं, सब ठीक चल रहा है, आप अपने कार्य भी कर रहे हैं पर हर समय खुश नहीं हैं। (4) आप कामकाज कर रहे हैं पर खुशी नहीं है, यहाँ से डिप्रेशन की शुरूआत होती है। (5) दिन में कई बार आपको अच्छा नहीं लगता, जीवन इतना अच्छा नहीं, मज़ा नहीं। (6) जीवन ना होता तो अच्छा था। भले ही सुसाइड नोट नहीं है पर मन में कई बार आ जाता है कि भगवान मुझे ले ले तो अच्छा है। (7) इस अवस्था में आदमी मरने के मार्ग ढूँढने लगता है। (8) व्यक्ति सचमुच आत्महत्या कर लेता है क्योंकि उसे काम करना, खाना, खड़ा होना, कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा होता है।

प्रश्नः- क्या हमारी कुछ मान्यताओं का भी डिप्रेशन के साथ कुछ संबंध है?

उत्तरः- आमतौर पर हमारी मान्यता रहती है कि 'कभी खुशी, कभी गम'। हमारा विश्वास ऐसा बन गया है कि जीवन है तो कभी हँसना, कभी रोना होगा ही। यदि बहुत समय खुश रहें तो सुनने को मिलता है कि ज्यादा खुश मत होओ, अभी कोई दुख आ जायेगा। खुश होने में भी डर लगता रहता है। ज्यादा खुशी नेचुरल नहीं है, दुख किनारे पर खड़ा है। इस प्रकार की हमारी मान्यताओं ने हमें खुशी से दूर रखा है पर जब यह अनुभूति हो जाये कि यह आंतरिक है तो इसे प्राप्त करना सरल है। लक्ष्य रख लें कि सुख हमारी अपनी प्रापर्टी है। मैं इस प्रापर्टी को किसी भी

व्यक्ति को, परिस्थिति को छीन कर ले जाने नहीं दूँगा। सुबह ही यह विचार पक्का कर लें। फिर तो यदि कल के दिन खुशी 50% थी तो आज वह 75% हो जायेगी।

प्रश्न:- जब सुबह उठते हैं, कई लोगों की सोच ऐसी होती है – 'ओह, फिर एक और दिन! क्या करूँगा मैं सारा दिन? क्या होगा? फिर उन्हीं परिस्थितियों से गुज़रना पड़ेगा।' यह क्या है? क्या डिप्रेशन का लक्षण है?

उत्तर:- जो डिप्रेशन में पहले से हैं, उनके भी ये लक्षण हैं और ये लक्षण डिप्रेशन का आह्वान भी करते हैं। आप बच्चों की तरह उठिए, उठते ही सुबह की प्रकृति के नज़ारों को अपने भीतर उतरने दीजिए और सूर्योदय से पहले ही उठ जाइये।

प्रश्न:- यह कैसे पता पड़े कि मैं डिप्रेशन में हूँ, कौन-से लक्षण हैं?

उत्तर:- सजगता बहुत ज़रूरी है। आज हमारे में सजगता समाप्त हो रही है। मैं काम कर रही हूँ पर उसमें आनन्द नहीं आ रहा है तो सजग हो जाइये। जैसे कोई ड्राइवर ने बताया, पहले जब मैं ड्राइव करता था, गुनगुनाता था पर बहुत समय से मैंने गुनगुनाया नहीं है तो समझ में आया कि मेरी मन:स्थिति में बदलाव आया है, यह पहले जैसी नहीं है। यह अनुभव कि वह कौन-सा मोड़ था जहाँ से खुशी को खोना शुरू किया, इसी का नाम सजगता है।

प्रश्न:- क्या सजगता के बाद, बहुत दूर छोड़ आए उस मोड़ तक पहुँचना और खुशी को पुन: पाना संभव है?

उत्तर:- संभव है पर जितना जल्दी करेंगे, उतना ही सरल है। यदि दूसरी स्टेज में आप सजग हो गए तो पहली में पहुँचना सरल है। यदि छठी अवस्था में पहुँच गए और पहली में आना चाहें तो समय तो लगता है पर असंभव नहीं है। जैसे हमेशा खुश रहने वाला व्यक्ति यदि खुश रहते-रहते कभी उदास होना शुरू कर दे और उदासी की फ्रीकवेन्सी बढ़ने लगे तो उसी समय पकड़ ले, इससे सुधार जल्दी और सहज हो जाता है।

प्रश्न:- क्या इसके लिए प्रोफेशनल हेल्प चाहिए या अपने माइंड पावर से उबर सकते हैं?

उत्तर:- यह इस बात पर आधारित है कि आप कौन-सी अवस्था में हैं। शोध कहती है कि अन्तिम अवस्था से भी उबर सकते हैं पर मेहनत ज्यादा लगती है। व्यक्ति यदि विचारों की प्रक्रिया को समझ ले तो उबर सकता है। जैसे बीमारी के मूल वायरस को समझने से उससे उबरा जा सकता है। डिप्रेशन हमारे ग़लत विचारों के कारण होता है। हम दोष औरों को देते हैं। कभी सास को, कभी बॉस को आदि-आदि।

प्रश्न:- एक ग़लत मान्यता यह भी है कि डिप्रेशन कोई बीमारी नहीं है, यह हो जाता है परंतु जो इससे गुज़र रहा होता है वो बहुत तकलीफ में होता है। परंतु, आस-पड़ोस, घरवाले कहते हैं, हाँ, यह तो होता ही है, तो कितनी गंभीरता से इसे लेना चाहिए? इसमें ब्रेन में, शरीर में कुछ केमिकल परिवर्तन भी आते हैं क्या?

उत्तर:- आमतौर पर डिप्रेशन वाले को मानसिक रूप से कमज़ोर समझा जाने लगता है इसलिए वह छुपाता है। यहाँ तक कि आत्महत्या करने के एक दिन पहले तक भी वह यह आभास नहीं देता कि वह डिप्रेस है। केमिकल चेंज भी होते हैं। परिस्थितियों के कारण भी ऐसे परिवर्तन आते हैं। बहुत नहीं, पर कुछ हद तक जीन्स भी ज़िम्मेवार होते हैं कि माता-पिता को डिप्रेशन है तो बच्चों को भी हो सकता है। पर यह संभावना केवल 30 से 35% तक ही है।

प्रश्न:- क्या डिप्रेशन की स्थिति में रहने की भी आदत पड़ जाती है?

उत्तर:- जैसे कइयों को लगता है कि हमारी तरफ कोई ध्यान नहीं दे रहा है तो ध्यान आकर्षित करने के लिए भी कई लोग ऐसी स्थिति की आदत के शिकार हो जाते हैं। आज समय नहीं है एक-दो के लिए तो कई बार, विशेषकर, बच्चे तो ऐसी चीज़ के शिकार हो ही जाते हैं।

एक बार एक बच्चा साइकिल से खेल रहा था, साइकिल उस पर गिरी, माँ दौड़ कर आई, साइकिल उठाई पर बच्चे ने फिर ऐसे ही ठोकर मारी और माँ को फिर

साइकिल उठानी पड़ी। बच्चे ने चार बार ऐसा ही किया तब माँ को समझ में आया कि यह मेरा ध्यान आकर्षित करने के लिए ऐसा कर रहा है।

प्रश्नः- आज बच्चों में भी अकेलेपन का अहसास और परिणामरूप डिप्रेशन बढ़ रहा है। तो क्या हमारा परिवार, मित्र हमें इससे बाहर निकाल सकते हैं या दवाइयाँ ही एकमात्र सहारा हैं?

उत्तरः- सबसे पहले तो व्यक्ति का स्वयं का प्रयास उसे इससे बाहर निकालता है, फिर परिवार और मित्रजन भी बहुत कुछ कर सकते हैं। कुछ गलतियाँ जिन्हें वे करते हैं, उनसे वे बच सकते हैं। विशेष प्रकार के डिप्रेशन में दवाइयों की भी ज़रूरत पड़ती है। रिएक्टिव डिप्रेशन से 95% लोग बाहर आ सकते हैं। एन्डोजिनस डिप्रेशन में आपका प्रयास 50% तक सहायक हो सकता है, शेष तो दवाइयों से ही ठीक हो सकता है क्योंकि अंदर काफी केमिकल परिवर्तन आ चुके होते हैं।

सेल्फ काउंसलिंग बहुत आवश्यक है। यह मनोवैज्ञानिक कर सकता है पर हम स्वयं को ज्यादा जानते हैं। कई बार डॉक्टर के अथक प्रयास के बावजूद बहुत समय लगता है क्योंकि पेशेन्ट का अपना प्रयास बहुत ही कम होता है।

जब आप साइकोथेरेपिस्ट के सामने जाते हैं तो सबसे बड़ी समस्या यह होती है कि आप अपने को ओपन नहीं करते। अपनी हर कमज़ोरी को शेयर करना इतना सरल नहीं होता। साइकोथेरेपिस्ट अनुभव सुनाते हैं कि साल भर लग जाता है सब कुछ उगलवाने में।

प्रश्नः- कई बार व्यक्ति डिप्रेशन से उबरने के लिए किसी व्यक्ति को, जैसे कि मान लो साइकोथेरेपिस्ट को ही आधार बनाता है परंतु फिर स्वयं भी उससे अटैच हो जाता है। एक से निकलकर, दूसरे पर निर्भर हो गए, इस अटैचमेन्ट से कैसे बचा जाए?

उत्तरः- साइकोथेरेपिस्ट का ध्यान खिंचवाया जाए कि वह पेशेन्ट को आत्मनिर्भर बनाए, अपने प्रति जुड़ाव और निर्भरता से उसे बचाए।

प्रश्नः- आजकल हर बीमारी को डिप्रेशन नाम दे दिया जाता है, क्या यह सही है? ऐसा क्यों कहा जाता है?

उत्तरः- क्योंकि डिप्रेशन बहुत कॉमन हो गया है इसलिए यह नाम दे दिया जाता है, बाकी हर बीमारी डिप्रेशन नहीं है और न इससे उपजती है। जैसे आजकल फोबिया बढ़ रहा है। व्यक्ति को छोटी-छोटी बातों जैसे पानी आदि से डर लगता है। ऐसी ही एक बीमारी ओबसेसिव कम्पल है जिसमें व्यक्ति एक ही बात को बार-बार दोहराता है– 100 बार हाथ धुलाई करेगा, बार-बार देखेगा कि ताला लगाया है या नहीं। एंग्जायटी भी बहुत बड़ी बीमारी है। यह डिप्रेशन से बिलकुल भिन्न है। ये सभी बीमारियाँ डिप्रेशन नहीं हैं और न ही डिप्रेशन का हिस्सा हैं।

प्रश्नः- क्या डिप्रेशन के शारीरिक चिह्न भी होते हैं?

उत्तरः- इनको जानना भी ज़रूरी है। जैसे लोग डॉक्टर के पास जाते हैं, कहते हैं, पेट दर्द है, सिर दर्द है पर वास्तव में उन्हें डिप्रेशन होता है। कुछ साइक्लोजिकल टूल्स होते हैं जिनके द्वारा हम डिप्रेशन को माप सकते हैं। फिजिशियन को जब ये टूल्स दिए गए तो पता चला कि लगभग 30 से 35 प्रतिशत तक लोग जो, एम. डी. फिजिशियन के पास जा रहे थे और सिर दर्द, पेट दर्द की शिकायत कर रहे थे, डिप्रेशन के शिकार थे। शारीरिक बीमारियाँ भी डिप्रेशन से संबंधित हो सकती हैं। ऐसे केस में यदि डिप्रेशन दूर हो गया तो ये बीमारियाँ भी दूर हो जायेंगी। कुछ दिन पहले एक समाचार आया था कि स्कूल के कुछ बच्चों को पेट में दर्द हुआ लेकिन डायगनोस कराने के बाद भी बीमारी का कोई चिह्न सामने नहीं आया। तो अवश्य ही यह मानसिक बीमारी का परिणाम रहा।

आजकल हम बाहरी कारणों पर तो बहुत ध्यान देते हैं लेकिन आंतरिक कारणों पर ध्यान न देने के कारण उन्हें जड़ से उखाड़ नहीं पाते। थायराइड डिप्रेशन के कारण हो सकता है। हाइपोथायराइड के लक्षण भी डिप्रेशन जैसे हैं।

(क्रमशः)

'अपमान' – महान बनने का साधन

• ब्रह्माकुमार विनायक, आबू पर्वत

जैसे मानव मौत से डरता है, उसको रोकने के लिए निरंतर प्रयत्न करता रहता है वैसे ही एक और भय से भी भयभीत रहता है और उससे बचने का प्रयास करता रहता है, वह है अपमान का भय।

मानव, जीवन के कष्टों और परिस्थितियों को सहन करेगा, सामना करेगा लेकिन एक क्षण के अपमान को... कभी भी नहीं। दुलहन चाहती है कि ससुराल में कभी उसका अपमान न हो। बच्चे चाहते हैं कि माँ-बाप उनका अपमान न करें और वही माँ-बाप जब वृद्ध होकर बच्चों की शरण में जाते हैं तो यही आश रखते हैं कि बच्चे कभी भी उनका अपमान न करें। एक नौकर भी चाहता है कि मालिक से अपमान न हो। सार में यही कह सकते हैं, जन्म से लेकर अंतिम श्वास तक मानव मान-शान और प्यार की चाहना रखता है, न कि अपमान की।

जब संबंधों में, मित्र वर्ग में, कार्य व्यवहार में हमारा विरोध-अपमान करने वाला कोई नहीं हो तो हम समझते हैं कि हमारे जैसा खुशनसीब और कौन हो सकता है! जीवन सार्थक, धन्य हो गया।

क्या सचमुच हमारा ऐसा सोचना ठीक है? क्या अपमान इतनी भयानक वस्तु है जो बिल्कुल सहन नहीं की जा सकती? अगर हमारा कोई अपमान नहीं करे, हमें नफ़रत की नज़र से नहीं देखे, हमारे साथ वैर-विरोध नहीं रखे और हरेक व्यक्ति से हमें प्यार ही प्यार मिले तो क्या यह जीवन की सच्ची सार्थकता है?

हम तो खुशी से कह देते हैं, जी हाँ लेकिन इतिहास कहता है, नहीं। इतिहास-सिद्ध है कि महान व्यक्तियों को जन्म देने में, उनके अंदर छिपी गुप्त शक्तियों, गुणों और कलाओं को प्रत्यक्ष करने में जितना 'अपमान' ने बेहतर पात्र निभाया उतना 'प्यार' ने नहीं। इतिहास की इस आश्चर्यजनक बात को हम उदाहरण द्वारा समझेंगे।

अपमान से इतिहास-पुरुष का जन्म

एक भारतीय युवक, दक्षिण अफ्रीका में, रेल में प्रथम श्रेणी के डिब्बे में सफर कर रहा था। एक सहयात्री को यह सहन नहीं हुआ क्योंकि युवक 'रंगवाला' था। उसने अधिकारियों को बुलाया और एक अधिकारी ने युवक को वैन के डिब्बे में जाकर बैठने का आदेश दिया। लेकिन युवक ने इंकार किया क्योंकि उसके पास प्रथम श्रेणी में आरक्षित किया हुआ टिकट था, उसको वहाँ बैठने का पूर्ण अधिकार था। फिर भी अधिकारी ने पुलिस की मदद से धक्का देकर युवक को ज़बरदस्ती नीचे उतार दिया और सारा सामान नीचे फेंक दिया। अधिकारियों ने एक हैंडबैग के अलावा उसका सारा सामान भी ले लिया। पहाड़ी इलाका होने के कारण, अपमान के साथ-साथ उस यात्री को रात कड़ी ठंडी में गुज़ारनी पड़ी।

सौ साल पहले 'रंग भेद' के नाम पर जो अत्याचार हो रहा था, उनमें से एक अत्यंत दुखद घटना यह थी। वह युवक था मोहनदास करमचंद गांधी। लेकिन एक बहुत ही आश्चर्य की बात यह थी कि इस खंडनीय घटना के पीछे छिपे हुए राज़ को न वह अपमानित युवक जानता था और न ही जिसने अपमान किया वह जानता था। जैसे तीव्र प्रसव वेदना को सहन करने के बाद ही कुलदीपक का जन्म होता है वैसे ही इस तीव्र अपमान को सहन करके ही एक इतिहास पुरुष का जन्म हुआ। जर्जरित होकर बैठे हुए युवक के मन में बिजली चमकी। उसी क्षण उसने ठान लिया कि इस रंग भेद के अभिशाप से मानव कुल को मुक्त करना ही है और इस महान कार्य के लिए स्वयं को समर्पण करना है। वह एक ऐसी सुहावनी घड़ी थी जब मोहनदास के मन में महात्मा गांधी जी का जन्म हुआ, जिन्होंने पूरे विश्व को सत्य, अहिंसा और प्रेम का अमूल्य योगदान दिया।

अपमान ने साकार किया संविधान शिल्पी को

एक बालक को बहुत प्यास लगी थी लेकिन उसे कुआँ छूने की भी अनुमति नहीं थी क्योंकि वह महर साँचे का था। बालक प्यास को सह नहीं पाया और कुएँ में जाकर पानी पी लिया। किसी ने उसे देख लिया और चिल्लाकर लोगों को इकट्ठा कर लिया। सभी ने मिलकर निर्दयता से बालक को मारा। एक दिन जब वही बालक स्कूल जा रहा था, बरसात आनी शुरू हो गई। बचने के लिए उसने एक दीवार का सहारा ले लिया। घर के मालिक ने अंदर से यह दृश्य देख लिया कि एक महर बालक उसके घर को छू रहा है। वह तुरंत बाहर आया और बालक को ज़ोर से धक्का देकर पानी में गिरा दिया, उसकी सभी किताबें भी पानी में गिर गईं।

एक बार, यही बालक और उसका भाई अपने पिता से मिलने एक बैलगाड़ी में जा रहे थे। जब गाड़ी के मालिक को उनके कुल का पता चला तो उसने क्रोधित होकर बच्चों को गाड़ी से बीच रास्ते पर गिरा दिया।

अमानवीयता और अपमान की इन तीनों घटनाओं ने उस मासूम बालक के मृदु मन पर क्या प्रभाव डाला होगा? अपमान और तिरस्कार ने दुखी बनाने के बजाय बालक के मन में यह दृढ़ता पैदा की कि अस्पृश्यता के क्रूर पंजे से भारत को मुक्त करना ही है। संकल्प को साकार में लाकर मानव से ही, मानव पर होने वाले अत्याचारों को निर्मूल करने वाले, वे थे स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अंबेडकर।

मोहग्रस्त को बनाया महाकवि

रामबोला नामक एक व्यक्ति को अपनी पत्नी रत्नावली से अत्यंत मोह था। मोह इतना ज़्यादा था कि जब रत्नावली मायके गई तो रामबोला वियोग सह न पाया और बिगर निमंत्रण, मध्यरात्रि होते हुए भी ससुराल पहुँच गया। रत्नावली को पति की यह अति आसक्ति अच्छी नहीं लगी। क्रोध और नफरत से तप्त होकर उसने कहा, 'आपको लज्जा नहीं आई जो दौड़ते हुए आ गए, यदि इससे आधा मोह भी भगवान के चरणों के प्रति होता तो इस संसार के भय से आप मुक्त हो जाते।'

यह तीव्र अपमानकारी बोल रामबोला के हृदय को छू गया, वह स्तब्ध रह गया। इसी अपमान द्वारा एक महाकवि का उदय हुआ। इसी क्षण मोहग्रस्त रामबोला की मृत्यु हो गई और सुप्रसिद्ध संत कवि तुलसीदास जी प्रकट हो गए जिन्होंने रामचरित मानस जैसे अमर ग्रंथ की रचना की।

अब कहिए, अपमानित होना बुरी चीज़ है? अगर इन व्यक्तियों के जीवन में ये घटनायें नहीं घटतीं तो शायद इतिहास का शोकेस इन अमूल्य रत्नों से नहीं शृंगारा जाता। ऐसे सैकड़ों उदाहरण हमें इतिहास में मिलते हैं जो अपमान सहकर महान बन गए।

सृष्टि के आदि-मध्य और अंत का राज़ समझकर, इस सृष्टि नाटक में अपना अभिनय श्रेष्ठ बनाने के लिए पुरुषार्थ करने वाले आध्यात्मिक साधकों के जीवन में भी कई बार ऐसी घटनायें घटती हैं। **ऐसे संदर्भों में कभी-कभी ज्ञान की धारणा की गहराई की कमी के कारण, सहनशक्ति या समाने की शक्ति नष्ट हो जाने के कारण हम परेशानी और खिन्नता का अनुभव करते हैं तथा किनारा करने या उस स्थान को त्याग देने का निर्णय ले लेते हैं। मन में एक ग़लतफहमी बैठ जाती है कि अमुक व्यक्ति का कटु स्वभाव ही दुख व अशांति का कारण है तथा पुरुषार्थ में आगे न बढ़ने देने का मुख्य बाधक है। फिर हम भगवान से प्रार्थना करने लगते हैं, 'बाबा, यह मेरा अपमान करता रहता है, इसके कड़वे व्यवहार से मैं दुखी हूँ और पुरुषार्थ नहीं कर पा रहा हूँ। आप इसको मेरे से दूर कर दो तो मैं अच्छी रीति पुरुषार्थ कर आपका नाम बाला करूँगा।'**

यज्ञ इतिहास पर नज़र डालिए

लेकिन हमारी यह फ़रियाद इस यज्ञ के इतिहास को भी मंजूर नहीं है। वह हमें याद दिलाता है कि प्रजापिता ब्रह्मा, जिन पर सिर्फ एक-दो ने नहीं

बल्कि सारे समाज ने निंदा बरसाई, उनका अपमान किया लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि इस वैर-विरोध के बीच में ही ब्रह्मा बाप ने ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग की विधि द्वारा परमपिता परमात्मा से ज्ञान, गुण और शक्तियों को संपूर्ण रूप से धारण किया और सबसे पहले संपूर्णता के शिखर पर पहुँच गए। वे ही इस सृष्टि नाटक में मानव से देवमानव बनने का पहला उदाहरण बने। उन्होंने कभी किसी से किनारा नहीं किया, न सेवा का या सेवास्थान का त्याग किया। अपमान उनके लिए कभी भी रुकावट नहीं बना बल्कि पुरुषार्थ को तीव्र बनाने का एक साधन बना।

इसलिए अब इतिहास हमें हिम्मत दिलाते हुए कह रहा है कि अपमान इतनी भयानक चीज़ नहीं है जो उससे डरें। **जैसे हीरा, सोना आदि गहरी दबी अमूल्य धातुओं को निकालने के लिए विस्फोटक का इस्तेमाल करते हैं वैसे ही अपमान भी एक विस्फोटक है जो देह अहंकार के पत्थर को तोड़कर आत्मा के निजी दिव्य संस्कार को प्रत्यक्ष करता है।**

जो भी भाई-बहनें इस समस्या का सामना कर रहे हों, वे अपने को बदनसीब या दुखी समझकर व्यक्ति, सेवा या सेवास्थान का त्याग करने के बजाय अपने को खुशनसीब समझें क्योंकि हमारी महानता को प्रत्यक्ष करने की ज़िम्मेदारी उन्होंने अपने आप उठा ली है इसलिए हम उनका शुक्रिया अदा करेंगे। सहन शक्ति, समाने की शक्ति, स्नेह एवं शुभभावना के प्रयोग द्वारा हम अपमान को अपनी आध्यात्मिक साधना में तीव्रता लाने का एक साधन बनाकर स्नेहसागर शिव पिता को प्रत्यक्ष करेंगे।

अपमान को सकारात्मक रीति से स्वीकार करने के फायदे

अपमान से वैराग वृत्ति की ऐसी ज्वाला प्रज्वलित होगी जो एक ही पल में लगाव-झुकाव और मोह की सारी रस्सियाँ काटकर हमें व्यक्ति, वस्तु, वैभवों के बंधन से मुक्त कर देगी।

कोई हमारा अपमान कर रहा है और हम उस वक्त शांत रहकर उसे समा रहे हैं तो अन्य आत्मायें जो वहाँ हाज़िर हैं उनको भी तनाव की स्थिति में शांत रहने की प्रेरणा मिलेगी।

तनावपूर्ण वातावरण में भी मानसिक स्थिति को संतुलन में रखकर निर्णय लेने की शक्ति बढ़ेगी।

किसी भी कर्म के फल की इच्छा नहीं रहेगी अर्थात् नि:स्वार्थ भाव से कर्म करने का मनोभाव जागृत होगा।

निंदा को समाना भी कर्मभोग को चुक्तू करने की एक विधि है।

अपमान से हमारे अंदर सहन करने की शक्ति और समाने की शक्ति की गहरी धारणा होती है।

अपकारियों पर भी उपकार करने का विशाल मनोभाव जागृत होता है।

समय, स्थान और व्यक्ति को परखकर संबंध-संपर्क में आने की कला प्राप्त होती है।

इस गुह्य राज़ को समझाने के लिए ही ज्ञान-गुण-शक्तियों के सागर परमपिता परमात्मा ने यह महावाक्य उच्चारा है, 'निंदा हमारी जो करे मित्र हमारा सो होय।' ❖

स्वर्ग का द्वार है.. पृष्ठ 11 का शेष

मुझे परमात्मा से मुफ़्त में मिली और जब अपने अंदर झांकती हूँ तो इनका एक बहुत बड़ा कुण्ड महसूस होता है। इसी कारण मुझे भीतर की ओर झांकने की आदत पड़ गई है। बार-बार मैंने अपने अंतर को टटोला और अपने भीतर से कभी सुख का खज़ाना, कभी शांति का खज़ाना, कभी प्रेम का खज़ाना निकाला और लोगों को बाँटा। जिनको बाँटा, उन्होंने मुझे चार गुना अधिक दिया, फिर मैंने लोगों को आठ गुणा दिया, फिर मुझे सोलह गुना अधिक मिला। दुनिया के हर कोने में मुझे अपने लोग, सहयोग देने वाले लोग मिले। संसार में रहने वाला हर मनुष्य मुझे अपना नज़र आया। जब सब अपने नज़र आए तो न ईर्ष्या रही, न द्वेष, न रहा भय।'' इस प्रकार, आध्यात्मिक शृंगार उसकी कमज़ोरियों रूपी कालिमा को धो-पोंछकर उसे सदा खुशहाल बना देता है। ❖

चिन्ता से मुक्ति

• ब्रह्माकुमार भगवान, शान्तिवन

मनुष्य चिंतनशील प्राणी है। पशुओं की तुलना में वह अधिक समझदार और संवेदनशील है। जीवन के उतार-चढ़ाव तथा विभिन्न घटनाक्रमों के प्रभाव से तुरंत ही उसके मन में दुख पैदा हो जाता है। दुखानुभूति में विवेक काम करना बंद कर देता है – इसे ही चिंता कहा जाता है। वास्तव में सकारात्मक और गुणात्मक चिंतन अच्छा होता है। नकारात्मक और अवगुणात्मक चिंतन तन और मन दोनों के लिए घातक होता है। इसलिए ही कहा भी गया है, चिंता चिता के समान है। व्यर्थ चिंता में मनुष्य धीरे-धीरे अपने मनुष्यत्व को भस्म कर देता है। चिता तो केवल एक बार ही भस्म करती है लेकिन चिंता की यह चिता जीवन भर सुलगती और दहकती है। चिंता करने वाला मनुष्य घुट-घुट कर मृत्यु की ओर बढ़ता रहता है। इसलिए चिंता से मुक्त हो जीवन जीना, यह कला वर्तमान में हरेक में होनी आवश्यक है।

चिंता क्यों सताती है?

बुद्धि का स्तर ऊँचा होने के कारण मानव, लोक लाज और रीति-रस्म कायम रखने की कोशिश करते हैं। इनके निर्वाह के लिए कई चिंताओं का सामना भी करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, किसी को पढ़ने की चिंता, किसी को बेटी की शादी की चिंता, किसी को मकान बनाने की चिंता, किसी को व्यवसाय आगे बढ़ाने की चिंता, किसी को समाज में ऊँचा पद पाने की चिंता। इसके अतिरिक्त किसी को अनुमान के आधार पर भी चिंता होती है। किसी को अपने पापकर्म की चिंता होती है। जब मनोबल कमज़ोर हो जाता है तब मनुष्य चिंता करना शुरू करता है। वर्तमान समय हर मानव कोई ना कोई प्रकार की चिंता से भरकर ज़िन्दा ही चिंता की चिता में जल रहा है।

चिंता में निर्णय शक्ति काम नहीं करती

चिंता अंधकार के समान है। जिसको चिंता की यह बीमारी लगी, उसे जीवन के मार्ग में कुछ भी दिखाई नहीं देता है। किसी भी समस्या का हल ढूँढ़ने में उसकी निर्णय शक्ति काम नहीं आती है। चिंता करने से बुद्धि-बल कम हो जाता है। चिंता अनेक रोगों की जड़ है। जो व्यक्ति चिंता करता है, वह शारीरिक और मानसिक रूप से थकान अनुभव करता है। मनोबल कमज़ोर होने के कारण दूसरों की राय या सलाह उसके मन में चुभती है। इस कारण उसके मन में भय, अनुमान, शंका उत्पन्न हो जाते हैं। चिंता जब चरम सीमा तक पहुँच जाती है, चिंता का समाधान नहीं मिल पाता है तब व्यक्ति जीवघात भी कर लेता है। चिंता मानव जाति के लिए एक बहुत बड़ा अभिशाप है।

चिंता रूपी कीड़े

जब आंधी आती है तो पेड़ उखड़ जाते हैं और बने हुए घर उजड़ जाते हैं परन्तु चिंता तो आंधी से भी भयानक है। अमेरिका में एक पेड़ है, उसकी उम्र 400 वर्षों से भी ऊपर है। उस पर चौदह बार बिजलियाँ गिरी, तूफान और हिमानियों के असंख्य आघात उसने सहे, फिर भी वह ज़िन्दा रहा पर उसकी जड़ में लगे कीड़ों ने उसे धराशायी कर दिया। मानव जीवन भी उस वृक्ष जैसा ही है। परिस्थितियों रूपी तूफान आते हैं, अंधड़ उठते हैं, बिजलियाँ कड़कती हैं, जीवन का कुछ नहीं बिगड़ता। पर, जब चिंता रूपी ये कीड़े अंदर घुस जाते हैं तो हम मात खा जाते हैं। ये चिंताएँ प्राय: काल्पनिक होती हैं, ये चिंताएँ तुच्छ होती हैं। ये चिंताएँ गधे के रूप में सिंह की खाल ओढ़े आती हैं।

हम साहस को संभाले रखें। चिंताओं का गट्ठर न बनाएँ। साहस, धैर्य एवं आत्मविश्वास के प्रकाश के सामने चिंताएँ अंधेरे की तरह गायब हो जाती हैं।

सर्व चिंताओं से मुक्त बनने की कला

स्वयं परमपिता शिव परमात्मा सर्व आत्माओं को चिंता की चिता से निकालने की कला सिखाते हैं कि

1. हर परिस्थिति में याद रखो कि यह सृष्टि एक नाटक है, जीवन एक खेल के समान है।

2. इस संसार में जो भी कुछ हो रहा है, वह पूर्व निर्धारित है। कुछ भी नया नहीं है इसलिए 'चिंता ताकी कीजिए जो अनहोनी होय।'

3. रात-दिन, गर्मी-सर्दी, हानि-लाभ जीवन में क्रमिक रूप से आते-जाते रहते हैं। ये संसार चक्र के अंग हैं। अगर दुख ना आये तो सुख का अनुभव कैसे होगा? अगर अंधेरा नहीं होगा तो उजियारे का क्या महत्त्व? इसलिए जीवन के हर पहलू को अच्छा समझें।

4. हर समस्या उन्नति वा विकास का साधन है। हर परिस्थिति में धैर्य, साहस, उत्साह रखकर कार्य करें। बुरे दिन हमें कुछ सिखाने के लिए आते हैं।

जब मन-बुद्धि से शुद्ध संकल्पों में रमण करेंगे, परमात्म चिंतन में व्यस्त रहेंगे तो व्यर्थ चिंता से मुक्त रह सकेंगे। चिंता स्वयं मनुष्य ही पैदा करता है। चिंता करने के बजाय हर पल परमात्मा को याद करेंगे तो कोई भी प्रकार की चिंता टच नहीं करेगी।

इसीलिए कहा गया है,

'चिन्ता तेरी तभी मिटेगी
जब चिन्तन में ले लो राम।'

तो आइये अब चिंता की चिता को बुझाने के लिए शांति सागर परमात्मा के चिंतन से स्वयं को शांत बनायें। जब हम स्वयं शांतस्वरूप बन जायेंगे तो विश्व में चिंताओं की आग में जलने वाले अनेक मानवों को बचा सकेंगे। सर्व चिंताओं से मुक्त होने की यह कला आप राजयोग द्वारा सीख सकेंगे। ❖

ज़रूरी है परिवार

ब्रह्माकुमारी आशा, चित्तौड़गढ़

मानव सामाजिक प्राणी है। समूह में रहना उसकी जन्मजात प्रवृत्ति है। अकेले रहकर मानव का विकास अवरुद्ध हो जाता है। यह बात अलग है कि वह समूह में रहते हुए, कुछ घड़ियों के लिए एकांत सेवन करे। ऐसा एकांत ज़रूरी भी है परंतु समूह से पूरी तरह कट जाना या उसके समीप आने में बोझ और भारीपन महसूस करना – ये सब बीमार मानसिकता की निशानियाँ हैं। जैसे खरबूजा ऊपर से अलग-अलग फ़ाँकों वाला दिखते हुए भी अंदर से जुड़ा रहता है, उसी प्रकार, अपने-अपने कार्यव्यवहार तथा ज़िम्मेवारियों की पूर्ति के लिए एक-दूसरे से दूर रहकर भी हम भीतर से अर्थात् मन से एक-दूसरे से पूरे जुड़े रहें – यही जीवन जीने की श्रेष्ठ कला है।

वृक्ष चाहे कितना भी बड़ा हो, उसका बीज एक ही होता है। यह सारी सृष्टि भी एक विशाल वृक्ष के समान है। परमात्मा पिता इसके अदृश्य बीज हैं। यदि किसी वृक्ष की एक डाली को, वृक्ष से अलग करके दूसरी जगह लगाकर पानी, खाद आदि अच्छे से दिया जाए तो भी वह मुरझा जाती है क्योंकि वृक्ष के जुड़ाव से जो बल मिल रहा था, वह बंद हो जाता है। इसी प्रकार से परमात्मा रूपी बीज द्वारा रचा गया यह श्रेष्ठ ईश्वरीय परिवार भी एक बहुत बड़े वृक्ष के समान है। यदि हम स्वयं के कारणों से या अन्य कारणों से इससे अलग होकर रहते हैं तो हम भी मुरझा जाते हैं, हमारी खुशी गुम हो जाती है, उमंग-उत्साह भी कम हो जाता है। यदि हम अधिक से अधिक इस परिवार के संबंध-संपर्क में आते रहते हैं तो इस परिवार की दुआयें एवं बल मिलता रहता है और उमंग-उत्साह भी बढ़ता जाता है। पुरुषार्थ भी सहज और अच्छा चलता है। हमारी कमी-कमज़ोरियाँ भी परिवार की दुआओं के बल से दूर हो जाती हैं। ❖

पृथ्वी दिवस पर विशेष..

संकल्पों से प्रकृति परिवर्तन

• ब्रह्माकुमारी श्वेता, चरखी दादरी

आज विश्व का चहुँ ओर का वातावरण विषैला हो गया है। दूषित जल के रूप में, दूषित वायु के रूप में और अत्यधिक शोर के रूप में स्थूल विष पर्यावरण में घुल रहा है। पर्यावरणीय विष का एक सूक्ष्म रूप भी है जिसे मानसिक प्रदूषण या वैचारिक प्रदूषण *(Thought Pollution)* कहा जा सकता है, जो दिखाई तो नहीं देता लेकिन दिनों-दिन हमारे आसपास के वातावरण को तेज़ी से तनावयुक्त, बोझिल, एकाकी और असुरक्षित बनाता जा रहा है। यह ज़हर भी मानव ही घोल रहा है अपनी दूषित मानसिक तरंगों से। स्थूल प्रदूषण तो मानव की अंधाधुंध वैज्ञानिक प्रगति का परिणाम है परंतु यह सूक्ष्म प्रदूषण उसकी दिनों-दिन होती जा रही नैतिक गिरावट का परिणाम है।

क्यों दूर है मनुष्य सच्ची सुख-शान्ति से?

एक समय ऐसा भी था जब विश्व के लोग विज्ञान की सर्वोच्च उपलब्धि प्राप्त होते हुए भी बहुत उच्च नैतिक चरित्र वाले थे। उस समय को आज भी सतयुग या स्वर्ण युग के नाम से याद किया जाता है। उस समय हर मानव में मूल्य थे। प्रकृति मनुष्य की दासी थी परंतु आज मानव प्रकृति का दास बन गया है। निरंतर मशीनों के साथ ने मानव को मशीन बना दिया है। उसमें ना भावनाएँ रही हैं, ना संवेदनाएँ। दिलचस्प बात है कि आज मशीनों के मानवीकरण की बात हो रही है लेकिन मानव के मशीनीकरण की परवाह नहीं। एक तरफ विज्ञान ने मानव को ऐसे साधन दिए हैं कि कल तक कोई उनकी कल्पना भी नहीं कर सकता था परन्तु तस्वीर का दूसरा पहलू भी है, आज मानव के कुकृत्य भी अकल्पनीय हो गये हैं। एक तरफ हैं भौतिक उन्नति की ऊँचाइयाँ तो दूसरी तरफ हैं नैतिक पतन की निचाइयाँ। यही कारण है कि सब तरह के सुख-साधनों की भरपूरता के बावजूद मनुष्य सच्ची सुख-शान्ति से कोसों दूर है।

व्यर्थ जाती संकल्प शक्ति

इस नैतिक पतन का मुख्य कारण है मानव के दूषित विचार। आज इंसान के संकल्प बहुत तीव्र गति से तथा गलत दिशा में चलते हैं। मन के अंदर संकल्पों की बाढ़-सी आई हुई है। इसलिए वह ज़रा-सा काम करते ही थकावट का अनुभव करता है। वास्तव में शारीरिक काम इतना नहीं थकाता जितना मन के संकल्पों की अधिक गति व्यक्ति को थका देती है। आज अगर व्यापक सर्वे किया जाये तो शारीरिक रोगियों की अपेक्षा मानसिक रोगी अधिक मिलेंगे। तनाव *(Stress),* चिन्ता *(Tension),* निराशा *(Depression)* जैसे मानसिक रोग तो आम हो गये हैं। एक ही विषय का बार-बार चिन्तन, अत्यधिक चिन्तन मनुष्य को रोगी बना देता है।

एक सेठ संत के पास गया, कहा, महाराज, मैं रोगी रहता हूँ। बी.पी. की शिकायत रहती है, रात को नींद नहीं आती। कुछ समाधान बताएँ। संत ने पूछा, अच्छा यह बताओ, कारोबार ठीक चल रहा है? सेठ ने कहा, और तो सब ठीक है, बस इन दिनों थोड़ी मंदी चल रही है। संत ने पूछा, परिवार में सुख-शान्ति है? सेठ ने कहा, और तो सब ठीक है, बस थोड़ा बहू-बेटे से खिटपिट रहती है। संत ने पास रखा कमण्डल हाथ में उठाया और पूछा, अगर मैं इस कमण्डल को कुछ मिनट ऐसे ही पकड़े रखूँ तो क्या होगा? व्यक्ति ने कहा, कुछ नहीं। संत ने फिर पूछा, और अगर मैं इसे ऐसे ही

एक घंटे तक पकड़े रखूँ तो क्या होगा? व्यक्ति ने जवाब दिया, आपका हाथ दर्द होने लगेगा, हो सकता है सुन्न भी हो जाये। संत ने पूछा, यह दर्द मुझे न हो, इसके लिए मुझे क्या करना चाहिए? व्यक्ति ने कहा, यह भी कोई सवाल है, आपको कमण्डल छोड़ देना चाहिए। संत ने कहा, इसी तरह भले मनुष्य, सब कुछ ठीक होते हुए भी अगर तुम मन में छोटी-छोटी बातों को पकड़े रहोगे तो ये तुम्हें शारीरिक और मानसिक रूप से बीमार तो करेंगी ही। पहले मन को इन बातों से मुक्त करो तो शरीर स्वस्थ हो जायेगा।

यह केवल उस एक सेठ की बात नहीं है बल्कि अधिकतर मनुष्यों पर आज लागू हो रही है। हम अर्थहीन बातों का बोझ ढोते रहते हैं।

मानवीय संकल्पों का वनस्पतियों पर प्रभाव

मनुष्य के संकल्पों का वनस्पतियों पर भी प्रभाव पड़ता है। इस संबंध में जगदीशचंद्र बोस ने अनेक प्रयोग किये हैं। भारतीय वैज्ञानिक डॉ.टी.सी.सिंह ने चेन्नई स्थित अन्नामलाई विद्यापीठ में वाद्ययंत्रों द्वारा वनस्पतियों पर अनेक प्रयोग किये और सिद्ध किया कि पेड़ों की बढ़ोतरी तथा फल, फूल व बीज इत्यादि के विकास पर संगीत का अनुकूल प्रभाव पड़ता है। ऐसे संगीत से पत्तों की संख्या 72% बढ़ गई तो पेड़ का विकास 20% ज्यादा दिखाई दिया।

प्रजापिता ब्रह्मा कुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में श्रेष्ठ संकल्पों का प्रयोग फसलों पर किया जाता है जिससे बिना कीटनाशकों और रासायनिक खादों के अच्छी रोगमुक्त फसल प्राप्त की जाती है। साथ ही हृदय संबंधी बीमारियों के इलाज में भी यह प्रयोग कारगर सिद्ध हुआ है।

संकल्पों का पानी पर प्रभाव

मानवीय संकल्पों के पानी पर पड़ने वाले प्रभाव को जानने के लिए जापान के Dr. Masaru Emoto ने अनेक प्रयोग किये। उन्होंने दो बोतलों में एक जैसा पानी लिया। एक बोतल के आगे खड़े होकर कई व्यक्तियों ने प्रेम, शान्ति, शुभभावना युक्त श्रेष्ठ संकल्प किये जैसे कि आप बहुत अच्छे हैं, मेरा आपसे बहुत स्नेह है। दूसरी बोतल के आगे खड़े होकर घृणा, नफरत, ईर्ष्या युक्त संकल्प किये जैसे कि आप बहुत खराब हो, मैं तुम्हें मार दूँगा आदि-आदि। बाद में उन दोनों बोतलों के पानी को बहुत कम तापमान ($-25^{0}C$) पर फ्रीज़ करके लेबोरेटरी में जाँच की गई तो पहली बोतल के पानी में बहुत सुन्दर क्रिस्टल पाए गए। दूसरी बोतल का पानी गटर के पानी जैसा काला दिखाई दिया। इसी तरह का दूसरा प्रयोग किया गया, पानी के दो गिलास लिए गए, पहले पर लिखा – Thank You, दूसरे पर लिखा, Fool. पहले गिलास के पानी से अच्छे क्रिस्टल बन गए, दूसरे गिलास का पानी काला दिखाई दिया। अब आप समझ ही गये होंगे कि जब पानी पर संकल्पों का इतना प्रभाव पड़ता है तो शरीर का तो 75% भाग पानी ही है। अत: हमारे गलत संकल्पों का शरीर पर कितना प्रभाव पड़ता होगा!

संकल्पों का प्राणियों पर प्रभाव

भारत के प्राचीन साहित्य में वर्णन आता है कि आश्रमों में कदम रखते ही मनुष्य अपना दुख तथा ग़म भूल जाते थे, हिंसक प्रवृत्ति के व्यक्ति के हिंसात्मक विचार शांत हो जाते थे। तपस्वी के आस-पास हिंसक प्राणी भी आकर शांति से बैठ जाते थे। इसका कारण यही है कि श्रेष्ठ संकल्पों के प्रभाव से बुरी प्रवृत्तियाँ बदल जाती हैं।

जिस प्रकार कम और गहरे श्वास लेना शारीरिक उम्र को बढ़ाता है उसी तरह संकल्पों का कम मात्रा में और शक्तिशाली होना मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखता है। जैसे प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, बिजली की बचत के लिए प्रेरित किया जाता है, वैसे ही संकल्प शक्ति की बचत के प्रति भी लोगों को सचेत किया जाना आवश्यक है।

वायु प्रदूषण को कम करने के लिए अधिक से अधिक वृक्ष लगाये जाते हैं। जल प्रदूषण को रोकने के लिए बड़ी-बड़ी परियोजनायें चलाई जा रही हैं। नदियों के किनारे से कारखाने हटाए जा रहे हैं। जैसे पर्यावरण दिवस और पर्यावरण सप्ताह मनाकर, अधिक से अधिक वृक्ष लगाकर पर्यावरण को हरा-भरा बनाने का प्रयत्न किया जाता है इसी की तर्ज पर शुभ संकल्प सप्ताह भी मनाया जाये। हफ़्ते भर आपसी स्नेह, प्यार, भाईचारे, ईमानदारी, निष्ठा, त्याग जैसे गुणों से भरे संकल्प लोगों को अभ्यास के लिए दिये जाएँ।

आत्मा मूलतः ज्ञान, प्रेम, शांति, पवित्रता से युक्त है और परमात्मा इन सभी गुणों व शक्तियों के सागर हैं। जब हम स्वयं को आत्मा समझ कर परमात्मा को याद करने लगते हैं तो परमात्मा के सभी गुणों व शक्तियों का संचार आत्मा में होने लगता है और आत्मा भरपूरता का अनुभव करने लगती है। फिर इन गुणों व शक्तियों के शक्तिशाली प्रकंपन आत्मा से चहुँ ओर फैलने लगते हैं और प्रकृति सहित सभी पर इनका प्रभाव होने लगता है।

वैचारिक प्रदूषण को कम करने की दिशा में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यहाँ सिखाये जाने वाले ज्ञान से व्यक्ति को स्वयं का, परमात्मा का, सृष्टि-चक्र का, कर्मों की गहन गति का ज्ञान हो जाता है। कोई भी परिस्थिति आने पर यह ज्ञान उसकी बहुत मदद करता है, भूतकाल की किसी दुखदायी घटना का बार-बार चिंतन बंद हो जाता है; अपमान, ग्लानि आदि बातों में भी उसकी स्थिति एकरस रहती है जिससे व्यर्थ जाने वाली संकल्प शक्ति की बचत हो जाती है। इसके अतिरिक्त राजयोग का अभ्यास उसके मन को शक्तिशाली संकल्प देता है जिससे मन का इधर-उधर भटकना बंद हो जाता है, परिणामस्वरूप, एक साधारण व्यक्ति भी असाधारण प्रतिभावान बन जाता है।

❖

अनगिनत खज़ाने

ब्रह्माकुमारी अंजना

बाबा ने दिए सबको खज़ाने एक समान
वंचित रहे न कोई चाहे बच्चा, बूढ़ा या जवान।
संगम पर ही खुलती है, खज़ानों की दुकान
चाहे तो कोई मुट्ठी भर ले, चाहे पूरा मकान।
ज्ञान-धन से बंधनमुक्त हो जाता इंसान
ज्ञान-सूर्य की किरणों से मिट जाता अज्ञान।
दिव्य गुणों की धारणा से मानव बने महान
जीवन-पुष्प खिल जाता, न्यारा कमल समान।
ब्रह्मा बाप का जीवन है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण
योग है एक अद्भुत आध्यात्मिक विज्ञान।
प्राप्त होती शक्तियाँ, शिव से लगाकर ध्यान
मिटते पाप सभी, रहे न कोई नामो-निशान।
फ़रिश्ता बन, भरनी आ जाए ऊँची उड़ान
ज्ञान, योग व सेवा फिर बन जाता दीन-ईमान।
हिला न सके उसको माया का कोई तूफान
अनगिनत दुआयें मिलती, होता जीवन आसान।
न्यारा-प्यारा बन, पाता वो सबका सम्मान
खुशी मिलती इतनी, न की जा सके बयान।
संगम का एक घंटा है एक वर्ष समान
जब धरा पर स्वयं आते भगवान।
आकर देते हैं बिन माँगे अखुट वरदान
रात्रि को अपने कर्मों का करो बाप से मिलान।
उमंग-उल्लास भर जाए, मिट जाए सारी थकान
खिली रहे चेहरे पर सदा मीठी मुस्कान।
नहीं तो धर्मराजपुरी में भरना पड़ेगा लगान
अलविदा कहो माया को, न होना परेशान।
निर्विघ्न बन पाना इनाम, पास कर हर इम्तहान
शीघ्र ही बनेगा, अब भारत देव स्थान।
प्रभु आगमन का कर दो तुम सबको ऐलान
सर्व के सहयोग से करना है, विश्व नव-निर्माण।

पहाड़ जैसा दुख भूल गई

• ब्रह्माकुमारी सती देवी वारियर, नेरुल, नई मुंबई

मेरी ज़िन्दगी दुखों से भरपूर थी। मैं अपने आपको दुनिया की सबसे दुखी इंसान समझती थी। दुख का कारण था मेरे प्रिय पुत्र का वियोग। जवान बेटे की असमय मृत्यु ने ज़िन्दगी को उथल-पुथल कर दिया था। हर समय पुत्र का मासूम चेहरा आँखों के सामने दिखाई देता था। भगवान में आस्था टूट गई थी इसलिए मंदिर जाना, भजन-कीर्तन सुनना सब मैंने बंद कर दिया था। मन की शान्ति की खोज में दर-दर भटक रही थी।

एक भाई ने मेरी दयनीय हालत देख प्रजापिता ब्रह्मा कुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा आयोजित राजयोग शिविर का लाभ उठाने का सुझाव दिया परन्तु किसी का प्रवचन, भाषण या उपदेश सुनना मुझे पसन्द नहीं था। इसलिए शिविर में जाने से मैंने मना कर दिया लेकिन वह भाई मुझे मनाकर शिविर में ले गया। शिविर में रोज़ सुबह मुझे जीवन के बारे में समझाया गया। सात दिन का कोर्स पूरा होने के बाद मैं मुरली (ईश्वरीय महावाक्य) सुनने लगी। धीरे-धीरे मुझमें परिवर्तन आ गया। ईश्वरीय मधुरवाणी सुनकर बार-बार सुनने की इच्छा जागृत हो गई। श्रीमत प्रमाण मैंने परमपिता शिवबाबा पर अपना दुख-दर्द समर्पित कर दिया।

बाबा के आशीर्वाद से मुझे शांतिवन जाने का सौभाग्य भी मिल गया। उस पावन नगरी का स्वच्छ, शांत, मोहक वातावरण देख मैंने मन ही मन बाबा को कोटि-कोटि प्रणाम अर्पित किए। प्रतिदिन के मधुर स्नेहयुक्त उपदेश सुनकर मैं अपने पहाड़ जैसे दुख को भूल गई। उस वातावरण में घर, प्रिय पुत्र के वियोग आदि से मैं उपराम हो गई। उस पावन नगरी के ईश्वरीय वातावरण में मन निहाल हो गया। शिविर की अवधि पूरी होने के बाद न चाहते भी वापस आ गई। मधुबन से लौटने के बाद मुझमें बहुत परिवर्तन आ गया।

जब-जब पुत्र का वियोग मुझे सताता, उस समय मैं बाबा को स्मरण करने लगी। तब बाबा के दिव्य मुखमंडल की तेजस्वरूप मुस्कान से मुझे सांत्वना मिलने लगी। **जिस प्रकार धान के खेत से अवांछित पौधों को उखाड़ दिया जाता है, उसी प्रकार ईश्वरीय उपदेश ने मेरे मन की पीड़ा को उखाड़कर फेंक दिया। ज्ञानामृत के रसास्वादन की मधुर अनुभूति के सौभाग्य से मेरा मन शांत हो गया।** पुत्र की याद से आने वाली उदासी की जगह मानस में शिवबाबा की मधुर

स्मृति बसने लगी। अब मैं दुखी नहीं हूँ। मैं अतीत को भूलकर वर्तमान में जीने लगी हूँ। मेरा जीवन धन्य हो गया है। जब भी उदास हो जाती हूँ, बाबा का स्मरण करती हूँ। मुझे एहसास होता है कि बाबा बड़े प्यार से सिर पर हाथ रखकर मुझे तसल्ली दे रहे हैं।

ईश्वरीय सेवा के निमित्त दादियों, दीदियों और भाइयों के प्रवचनों से मेरा मन हमेशा प्रसन्न रहता है। उन देवियों का सेवाभाव, त्याग की भावना, बाबा पर अटूट विश्वास सब मेरे लिए प्रेरणादायक हैं। ठीक ही तो कहते हैं, 'जीना है तो रोते-रोते जीने से अच्छा है, हँसते-हँसते सबको सुख देते हुए जीओ।' शिवबाबा और इन निःस्वार्थ कर्मठ भाई-बहनों ने मेरी ज़िन्दगी का काया-पलट कर दिया इसलिए मैं बाबा तथा भाई-बहनों को कोटि-कोटि प्रणाम करती हूँ। ❖

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 worldrenewal@bkivv.org